ओ३म्

गुरुकुल दर्शन

वैदिक एवं राष्ट्रीय मूल्यों का संवाहक

वेदोद्धारक आर्य समाज के संस्थापक

स्वामी दयानन्द सरस्वती

गुरुकुल कुरुक्षेत्र के संस्थापक

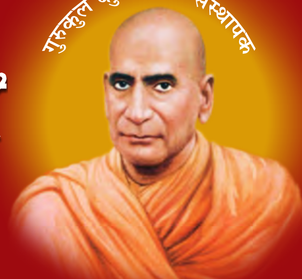

स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती

गुरुकुल कुरुक्षेत्र का मुख पत्र

माघ वि. स. २०७४ • कलियुगाब्द ५११८ • वर्ष : ०५ • अंक : ०२ • फरवरी २०१८

'गुरुकुल बना डायरेक्टर्स ट्राफी का ओवरऑल चैम्पियन'

एनआईटी द्वारा आयोजित डायरेक्टर्स ट्राफी में गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। प्रतियोगिता में गुरुकुल कुरुक्षेत्र 12 स्वर्ण और 12 रजत पदकों के साथ ओवरऑल चैम्पियन बना। महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत ने प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी, प्राचार्य कर्नल अरुण दत्ता, सह-प्राचार्य शमशेर सिंह सहित समस्त गुरुकुल परिवार को इस उपलब्धि पर शुभकामनाएँ दी।

स्वामित्व :
गुरुकुल कुरुक्षेत्र (हरियाणा)-136 119
(केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् नई दिल्ली से 10+2 तक सम्बद्ध)
दूरभाष: 01744–238048, 238648
E-mail : kurukshetragurukul@gmail.com Website : www.gurukulkurukshetra.com
AN ISO 2008 CERTIFIED INSTITUTE

गणतंत्र दिवस समारोह में ध्वजारोहण करते हुए गुरुकुल के प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी, प्राचार्य कर्नल अरुण दत्ता व अन्य महानुभाव

समाज सुधार की झलकियाँ

महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी को जन्मदिवस की बधाई देते हुए हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री जयराम ठाकुर व अन्य महानुभाव

लोकसभा की माननीया स्पीकर श्रीमती सुमित्रा महाजन के साथ 'जीरो बजट प्राकृतिक कृषि' मॉडल पर चर्चा करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

कुरुक्षेत्र के गांव रामशरण माजरा में 'जीरो बजट प्राकृतिक खेती' पर आयोजित किसान मेला को सम्बोधित करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

बी.पी.आर. सीनियर सैकेण्डरी स्कूल, पाडला में 'जीरो बजट प्राकृतिक खेती' पर आयोजित किसान मेला में उमड़े जनसमूह को सम्बोधित करते हुए राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

जीरो बजट प्राकृतिक कृषि पर आयोजित किसान मेले में महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी का स्वागत करते हुए सरपंच रमेश सैनी व अन्य महानुभाव

महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी का महर्षि दयानन्द का 'स्मृति-चिह्न देकर स्वागत करते हुए उत्तर प्रदेश के जिला बागपत आर्यसमाज के पदाधिकारीगण

राजभवन शिमला आगमन पर महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री देवेन्द्र फडनवीस का हिमाचली टोपी पहनाकर स्वागत करते हुए महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

राजभवन शिमला आगमन पर केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री जे. पी. नड्डा व राज्यमंत्री नायब सैनी का शॉल भेंट कर स्वागत करते हुए महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

ओ३म्

गुरुकुल दर्शन

'सम्पादक परिवार'

संरक्षक : आचार्य देवव्रत
(महामहिम राज्यपाल, हि. प्र.)
मुख्य संपादक : कुलवंत सिंह सैनी
मार्गदर्शक : विश्वबंधु आर्य
प्रबंध-संपादक : शमशेर सिंह
सह-संपादक : आचार्य सत्यप्रकाश
सूबेप्रताप आर्य
सुखविन्द्रपाल आर्य
नंदकिशोर आर्य
कानूनी सलाहकार : राजेन्द्र सिंह 'कलेर'
वित्तीय सलाहकार : सतपाल सिंह
पत्रिका व्यवस्थापक: राजीव कुमार आर्य
वितरण व्यवस्थापक: समरपाल आर्य
: अशोक कुमार

गुरुकुल भूमिदाता
सेठ ज्योति प्रसाद जी

अनुक्रमणिका

क्र.	विवरण	पृ.सं.
1.	सम्पादकीय : स्वामी दयानन्द सरस्वती जी	02
2.	छात्रों में बढ़ती अनुशासनहीनता	03
3.	धर्म और मत में भेद	04
4.	अग्नि की महिमा	06
5.	बच्चों को दें अच्छे संस्कार	08
6.	विश्व शान्ति का एक ही मार्ग : वैदिक धर्म	10
7.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	11
8.	जिम्मेदार कौन ?	13
9.	क्यों करना चाहिए हवन ?	14
10.	काम आएँ, सर्वदा शुभकामनाएँ	15
11.	भक्त की दृष्टि	17
12.	भारत में है ज्ञान-विज्ञान का भण्डार	18
13.	वास्तविक जीवन की खोज	20
14.	गुरुकुल कुरुक्षेत्र की मधुर स्मृतियाँ	21
15.	गीत : वीरों की गाथा	22
16.	गैर कृषि विश्वविद्यालय की अनूठी पहल	23
17.	गुरुकुल कुरुक्षेत्र : संक्षिप्त परिचय	24

आवश्यक सूचनाएं

1. '**गुरुकुल दर्शन**' मासिक पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण लेखकों के हैं, संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्याय-क्षेत्र कुरुक्षेत्र होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के अन्दर ही मानी जाएगी।
2. पत्रिका के विलम्ब अथवा अनियमित रूप से मिलने की स्थिति में चलभाष 8689002402 पर सूचना देवें। पत्रिका के सम्बन्ध में आपकी प्रतिक्रिया और सुझाव की हमें अपेक्षा रहेगी।

– संपादक

पुण्य कर्मों का सदा शुभ फल अवश्य मिलता है।

संपादकीय

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी

आर्यसमाज *के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती का नाम अपने अनोखे व्यक्तित्व और बेमिसाल प्रभाव के कारण जन-जन के मन में आदरपूर्वक बसा हुआ है। स्वामी दयानन्द जी ने एक साथ ही आडम्बरों, अन्धविश्वासों और अमानवीय तत्त्वों का जमकर विरोध करते हुए मानवीय सहानुभूति का दिव्य संदेश दिया। आपने राष्ट्रभाषा हिन्दी को मान्यता देने के लिए स्वभाषा और जाति के स्वाभिमान को जगाया।*

स्वामी जी *का जन्म गुजरात राज्य के मौरवी क्षेत्र में स्थित टंकारा नामक स्थान में 12 फरवरी 1824 को हुआ था। स्वामी दयानन्द का उदय हमारे देश में तब हुआ था जब चारों ओर से हमें विभिन्न प्रकार के संकटों और आपदाओं का सामना करना पड़ रहा था। उस समय हम विदेशी शासन की बागडोर से कस दिए गए और सब प्रकार के मूलाधिकारों से वंचित करके अमानवता के वातावरण में जीने के लिए बाध्य कर दिए गए थे। स्वामी दयानन्द जी ने अपने वातावरण, समाज और राष्ट्र सहित विश्व की इस प्रकार की मानवता विरोधी गतिविधियों का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया और इन्हें जड़ से उखाड़ देने का दृढ़ संकल्प भी किया।*

स्वामी दयानन्द *का बचपन का नाम मूलशंकर तिवारी था। स्वामी जी की आरम्भिक शिक्षा संस्कृत विषय के साथ हुई। इससे स्वामी जी के संस्कार, दिव्य और अद्‌भुत दिखाई पड़ने लगे और लगभग 12 वर्ष के होते-होते आपके संस्कार इसमें पूर्णत: बदल गए। हम यही भली भांति जानते हैं जो महान पुरुषों के जीवन में कोई न कोई कभी ऐसी घटना घट जाती है जो उनके जीवन को बदल डालती है। मूलशंकर ने एक दिन शिवरात्रि के सुअवसर पर शिवलिंग पर नैवेद्य खाते हुए चूहे को देखा। इसे देखकर मूलशंकर के मन में सच्चे शिव को प्राप्त करने की लालसा या अभिलाषा अत्यन्त तीव्र हो उठी।*

21 वर्ष *की आयु में वे अपने सम्पन्न परिवार को छोड़कर संन्यास पथ पर निकल पड़े। वे योग साधना करके शिव की प्राप्ति के लिए कठोर साधना करते हुए सच्चे गुरु की खोज में निकल पड़े थे। इस साधना सिद्धि के पथ में वे अनेक प्रकार के योगियों, सिद्धों और महात्माओं से मिले, ये विभिन्न तीर्थ स्थलों, धार्मिक स्थानों और पूज्य क्षेत्रों में भी भ्रमण करते रहे। बदरीनाथ, हरिद्वार, केदारनाथ, मथुरा आदि आध्यात्मिक क्षेत्रों का परिभ्रमण स्वामी जी ने किया। मथुरा में स्वामी जी को तत्कालीन व्याकरण के सूर्य दण्डी विरजानन्द जी का सम्पर्क प्राप्त हुआ था। इनके निर्देशन में स्वामी जी ने लगभग 35 वर्षों तक व्याकरण व वेदों का अध्ययन किया। स्वामी विरजानन्द जी ने जब यह भलीभांति सन्तोष प्राप्त कर लिया कि दयानन्द का अध्ययन, शिक्षा दीक्षा पूर्ण हो चुकी है, तो उन्होंने अपने इस अद्‌भुत शिष्य को यह दिव्य आदेश दिया कि* ***'अब जाओ, और देश में फैले हुए समस्त प्रकार के अज्ञानान्धकार का दूर करो।'*** *गुरु आदेश को शिरोधार्य करके दयानन्द जी इस महान उत्तरदायित्व का निर्वाह करने के लिए सम्पूर्ण देश का परिभ्रमण करने लगे।*

देश के *विभिन्न भागों में परिभ्रमण करते हुए स्वामी जी ने आर्य समाज की स्थापनाएं की। अन्धविश्वासों और रूढ़ियों का खण्डन करते हुए मूर्ति पूजा का तर्क के साथ विरोध किया। इसी सन्दर्भ में आपने एक महान और सर्वप्रधान ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' को लिखा। इसके अतिरिक्त 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका', 'संस्कारविधि', 'व्यवहारभानु', 'वेदांग प्रकाश' आपके श्रेष्ठ ग्रन्थ हैं।*

राष्ट्र *में फैले अज्ञानान्धकार को स्वामी जी ने मनसा, वाचा, कर्मणा और अन्य प्रभावी शक्तियों के द्वारा दूर करने का भगीरथ प्रयास किया। इससे सबके मन में जागृति और संचेतना की लहर लहरा उठी। उत्साहित मन की तरंगें बन्धन के तट को बार -बार गिरा देने के लिए शक्तिशाली हो उठी। एक अद्‌भुत जन-जागरण का संदेश हमारे तन-मन को स्पर्श करने लगा।*

स्वामी जी *ने अपने आर्यावर्त देश के प्रति अपार प्रेम भक्ति को प्रकट करते हुए कहा था* ***'मैं देशवासियों के विकास के लिए और संसार में सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त करने के लिए प्रतिदिन प्रात:काल और सायं भगवान् से प्रार्थना करता हूं कि वह दयालु भगवान मेरे देश को विदेशी शासन से शीघ्र मुक्त करे।'*** *स्वामी जी ने बाल-विवाह का कड़ा विरोध किया था।*

स्वामी दयानन्द सरस्वती *ने हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता दिलाने के लिए भरपूर कोशिश की। आर्य समाज के स्थापना-संस्थलों पर दयानन्द विद्यालय-महाविद्यालय भी भारतीय शिक्षा के प्रचार प्रसार कार्य में लगे हुए हैं। वास्तव में स्वामी दयानन्द सरस्वती एक युग पुरुष थे, जो काल पटल पर निरन्तर श्रद्धा के साथ स्मरण किए जाते रहेंगे। हमारा यह दुर्भाग्य ही था कि स्वामी जी को धर्म प्रचारार्थ जोधपुर नरेश के यहाँ एक वेश्या ने प्रतिशोध की दुर्भावना से विषाक्त दूध पिलवा दिया जिससे उनका लगभग 59 वर्ष की अल्पायु में 30 अक्तूबर 1883 को निधन हो गया।*

- कुलवंत सिंह सैनी

जो सत्कर्म करता है वह दोनों लोकों में सुख पाता है।

छात्रों में बढ़ती अनुशासनहीनता

विश्व का वर्तमान परिदृश्य बीते सौ वर्षों में अभूतपूर्व रूप से परिवर्तित हो चुका है। वजह साफ है विज्ञान के बलबूते हमारे वैज्ञानिकों ने नित नये आविष्कारों को खोजकर हमारी जीवन-शैली को आमूल चूल रूप से बदलकर रख दिया है। इसके पीछे शिक्षा क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलावों और सभी वर्गों के बच्चों तक शिक्षा की पहुंच को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। हमारी आज की युवा पीढ़ी शिक्षा से प्राप्त ताकत के चलते सफलता की नई ऊँचाइयों पर पहुंच चुकी है तो वहीं कुछ प्रतिशत युवा बच्चे अपने माँ-बाप की खून-पसीने की कमाई को गुलछर्रों में उड़ाकर शायद मौज मस्ती, आवारागर्दी एवं अनुशासनहीनता को ही जीवन का मर्म समझ बैठे हैं। भारत जैसा राष्ट्र जहाँ विश्व की सर्वाधिक युवा आबादी मौजूद है, वहाँ युवाओं में बढ़ती अनुशासनहीनता बेहद चिंतनीय एवम् विचारणीय मुद्दा बन चुकी है। कहते हैं, **''युवा होना हर क्षण खतरे में जीना है और वृद्ध होना सुरक्षा की तलाश में भटकना है।''** क्या वास्तव में, आज का युवा खतरे में जीना चाहता है, सकारात्मक संघर्ष या पलायनवादी नीति पर चल रहा है?

प्रेम, साहस, शक्ति, ऊर्जा और संकल्प का ही दूसरा नाम युवावस्था है और किसी भी राष्ट्र की तरक्की में वहां की युवा ताकत बेहद महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। बेहतर रोजगार प्राप्ति की दिशा में पठन-पाठन और उच्च शिक्षा का अपना अलग महत्त्व है-जहां कुछ युवा इसके प्रति काफी सतर्क और गंभीर नजर आते हैं तो वहीं भौतिकतावाद और नशीले पदार्थों की ओर उन्मुख कुछ युवा शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक दिवालियेपन के चलते अपना सर्वश्रेष्ठ देना तो दूर रहा उल्टे अपने-अपने शिक्षण संस्थानों, परिवार, समाज और देश के समक्ष गंभीर समस्याएं एवं चुनौतियां खड़ी करते नजर आ रहे हैं। महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में पठन-पाठन के माहौल के विपरीत युवा उच्छृंखलता, फूहड़ता, फैशनबाजी, नशीले पदार्थों का सेवन और राजनीति में पड़कर वहां अनुशासनहीनता का खुलेआम प्रदर्शन कर रहे हैं। अमूमन रोजाना, प्रिंट और इलैक्ट्रॉनिक मीडिया ऐसे अनुशासनहीन युवाओं के कारनामों की खबरों से अटे पड़े रहते हैं। संस्कारों के अभाव और मानवीय मूल्यों में ह्रास के कारण हमारे युवा पतन के गर्त में धंसते चले जा रहे हैं। आज का युवा अपनी मादक पदार्थों की जरूरतों को पूरा करने के लिए अपराधी बनने से भी नहीं हिचकिचा रहा है। इसी अनुशासनहीनता के चलते हमारे कई पथभ्रष्ट युवा अलगाववादी, आतंकवादी, नस्लवादी, नक्सलवादी और साम्प्रदायिक विचारधारा के पैरोकारों के चंगुल में फंस जाते हैं। पाश्चात्य संस्कृति का अंधाधुंध अनुसरण, अश्लील फिल्में और इंटरनेट की आजादी हमारी युवा पीढ़ी को संस्कारविहीन बनाकर सामाजिक पतन की ओर ले जा रही है। जाहिर है कि जब आधुनिकता की आड़ में हमारी युवा पीढ़ी की जीवन शैली बदल चुकी है तो वह सफलता पाने के लिए शार्टकट फार्मूलों को अपनाने से भला क्यों हिचकिचाएगी और यही सोच व व्यवहार उन्हें नैतिक पतन की ओर ले जा रहा है। यदि समय रहते हमारे अभिभावकों और नीति-निर्माताओं ने सुधारात्मक एवं उपचारात्मक उपाय न ढूंढ़े तो निःसन्देह हमारी युवा पीढ़ी के पूर्णतया पथभ्रष्ट हो जाने की प्रबल आशंका से इंकार नहीं किया जा सकता है।

शमशेर सिंह

आज आवश्यकता है कि नए सिरे से हमारी युवा पीढ़ी के उत्थान के लिए संस्कारों पर आधारित शिक्षा प्रणाली की शुरूआत की जाए। हमारे शिक्षण संस्थानों में बेहतरीन सुविधाओं के साथ उच्च शिक्षित प्रशिक्षित विशेषज्ञ अध्यापकों की व्यवस्था को यकीनी बनाया जाए ताकि वे आत्मनिर्भर, स्वावलम्बी, स्वाभिमानी युवाओं की नई पौध को तैयार कर सकें। शिक्षण संस्थानों सहित राष्ट्र भर में मादक एवं नशीले पदार्थों की उपलब्धता को हतोत्साहित करने के साथ उचित दण्ड का प्रावधान भी होना चाहिए। हमारे शिक्षण संस्थानों को राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त बनाकर वहां राजनीतिक गतिविधियां, छात्र संघ चुनाव इत्यादि की व्यवस्था खत्म होनी चाहिए। रैगिंग का कोढ़ अभी भी परेशानी कारक सबब बना हुआ है। अश्लीलता परोसने वाली फिल्मों, टी. वी. कार्यक्रमों पर रोक लगनी चाहिए। रोजगार परक शिक्षा प्रणाली को बढ़ावा देकर युवाओं को स्वावलम्बी और स्वाभिमानी बनाने की दिशा में कदम बढ़ाने चाहिए ताकि वे विध्वंसकारी ताकतों का मोहरा न बन पाएं। शिक्षा प्राप्ति को महंगा होने से रोका जाना चाहिए, अभिभावकों पर अनावश्यक रूप से शिक्षा ऋणों का बोझ खत्म होना चाहिए। आदर्शों एवं नैतिक मूल्यों पर अवलम्बित शिक्षा प्रदान कर बच्चों में मानवीय मूल्यों और गुणों को विकसित कर उन्हें समाज का उपयोगी एवं जिम्मेदार अंग बनाने से ही समाज एवं विश्व का कल्याण होगा।

- शमशेर सिंह

सह-प्राचार्य गुरुकुल कुरुक्षेत्र

परलोक में केवल पुण्य ही प्राणियों का आधार होता है।

धर्म और मत में भेद

धर्म शब्द को लेकर संसार में बहुत भ्रांतियां फैल रही है। यूँ कहिये संसार में धर्म की सत्य परिभाषा को न समझकर मत-मतान्तर की संकीर्ण सोच को धर्म के रूप में चित्रित किया जा रहा है। विश्व में मुख्य रूप से ईसाई, इस्लाम और हिन्दू धर्म प्रचलित है। ईसाई समाज अपने आपको प्रगतिशील मानता है और धर्म के नाम पर प्रलोभन देकर धर्म परिवर्तन करना अपना हक समझता है। अपने इस कृत्य को ईसाई समाज वह धर्म मानता है। मुस्लिम समाज हिंसा और कट्टरवाद के बल पर अपनी संख्या बढ़ाने को आतुर है। उसकी इस सोच के चलते विश्व की शांति पर खतरा मंडरा रहा है। अपने इस कृत्य को मुस्लिम समाज वह धर्म मानता है। हिन्दू समाज अनेक मत-मतान्तरों में विभाजित है। सभी की अपनी अपनी मान्यता अपना अपना विश्वास है। देवी देवताओं की मूर्तियों से लेकर पीरों की कब्रों तक, गुरुओं से लेकर सांई बाबा तक इसके नवनिर्मित अनेक विश्वास के प्रतीक हैं। इन सभी की पूजा करना हिन्दू समाज धर्म समझता है।

प्रत्येक मत अपनी मान्यताओं को सही और दूसरे की मान्यतों को गलत बताता है। इनके इस प्रपंच को देखकर विश्व का एक बड़ा वर्ग अपने आपको नास्तिक कहने लगा है। वह न तो भगवान को मानता है न ही धर्म की सत्य परिभाषा से परिचित हैं। इस लेख के द्वारा हम धर्म और मत के अंतर को समझने का प्रयास करेंगे।

शंका : धर्म का अर्थ क्या है?

उत्तर : धर्म संस्कृत भाषा का शब्द है जोकि धारण करने वाली धृ धातु से बना है। **'धार्यते इति धर्म'** अर्थात् जो धारण किया जाये वह धर्म है। अथवा लोक परलोक के सुखों की सिद्धि के हेतु सार्वजानिक पवित्र गुणों और कर्मों का धारण व सेवन करना धर्म है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं की मनुष्य जीवन को उच्च व पवित्र बनाने वाली ज्ञानानुकूल जो शुद्ध सार्वजनिक मर्यादा पद्धति है, वह धर्म है।

जैमिनी मुनि के मीमांसा दर्शन के दूसरे सूत्र में धर्म का लक्षण है-लोक परलोक के सुखों की सिद्धि के हेतु गुणों और कर्मों में प्रवृत्ति की प्रेरणा धर्म का लक्षण कहलाता है।

वैदिक साहित्य में धर्म वस्तु के स्वाभाविक गुण तथा कर्तव्यों के अर्थों में भी आया है। जैसे जलाना और प्रकाश करना अग्नि का धर्म है और प्रजा का पालन और रक्षण राजा का धर्म है।

मनु स्मृति (6/9) में धर्म की परिभाषा -

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचं इन्द्रिय निग्रहः
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणं।।

अर्थात् धैर्य, क्षमा, मन को प्राकृतिक प्रलोभनों में फँसने से रोकना, चोरी त्याग, शौच, इन्द्रिय निग्रह, बुद्धि अथवा ज्ञान, विद्या, सत्य और अक्रोध धर्म के दस लक्षण हैं।

दूसरे स्थान पर कहा हैं **आचार:परमो धर्म** (1/108) अर्थात् सदाचार परम धर्म है।

महाभारत में भी लिखा है-**धारणाद् धर्ममित्याहुः, धर्मो धारयते प्रजाः** अर्थात् जो धारण किया जाये और जिससे प्रजा धारण की हुई है वह धर्म है।

वैशेषिक दर्शन के कर्ता **महामुनि कणाद** ने धर्म का लक्षण यह किया है -

यतोऽभ्युद निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः

अर्थात् जिससे अभ्युदय (लोकोन्नति) और निःश्रेयस (मोक्ष) की सिद्धि होती है, वह धर्म है।

शंका : स्वामी दयानंद के अनुसार धर्म की क्या परिभाषा है?

उत्तर : स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के तीसरे सम्मुलास में स्पष्ट लिखा है **'जो पक्षपात रहित न्याय सत्य का ग्रहण, असत्य का सर्वथा परित्याग रूप आचार है उसी का नाम धर्म और उससे विपरीत का अधर्म है।'** पक्षपात रहित न्याय आचरण सत्य भाषण आदि युक्त जो ईश्वर आज्ञा वेदों से अविरुद्ध है, उसको धर्म मानता हूँ। इस काम में चाहे कितना भी दारुण दुःख प्राप्त हो , चाहे प्राण भी चले ही जावें, परन्तु इस मनुष्य धर्म से पृथक् कभी भी न होवें। **(सत्यार्थप्रकाश मंतव्य)**

शंका : क्या हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि धर्म सभी समान हैं अथवा भिन्न हैं? धर्म और मत में क्या अंतर हैं?

उत्तर : हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि धर्म नहीं अपितु मत अथवा पंथ हैं। धर्म और मत में अनेक भेद हैं।

1. धर्म ईश्वर प्रदत्त है (जिसकी विवेचना ऊपर की गई है) बाकि मत-मतान्तर हैं जो मनुष्य कृत हैं।
2. धर्म लोगों को जोड़ता है जबकि मत विशेष लोगो में अन्तर को बढ़ाकर दूरियों को बढ़ावा देते हैं।
3. धर्म का पालन करने से समाज में प्रेम और सौहार्द बढ़ता है, मत विशेष का पालन करने से व्यक्ति अपने मत वाले को मित्र और दूसरे मत वाले को शत्रु मानने लगता है।
4. धर्म क्रियात्मक वस्तु है, मत विश्वासात्मक वस्तु है।
5. धर्म मनुष्य के स्वाभाव के अनुकूल अथवा मानवी प्रकृति का होने के कारण स्वाभाविक है और उसका आधार ईश्वरीय अथवा सृष्टि नियम है परन्तु मत मनुष्य कृत होने से अप्राकृतिक अथवा अस्वाभाविक है।
6. धर्म एक ही हो सकता है, मत अनेक होते हैं।

कार्य के अनुरूप प्रयत्न करने वाला धीर व्यक्ति खूब ऐश्वर्य प्राप्त करता है।

7. धर्म सदाचार रूप है अत: धर्मात्मा होने के लिये सदाचारी होना अनिवार्य है, मत अथवा पंथ में सदाचारी होना अनिवार्य नहीं है।

8. धर्म ही मनुष्य को मनुष्य बनाता है अर्थात् धार्मिक गुणों और कर्मों के धारण करने से ही मनुष्य मनुष्यत्व को प्राप्त करके मनुष्य कहलाने का अधिकारी बनता है जबकि मत मनुष्य को केवल पन्थाई या मजहबी अथवा अन्धविश्वासी बनाता है। दूसरे शब्दों में मत अथवा पंथ पर विश्वास लाने से मनुष्य उस मत का अनुयायी बनता है। नाकि सदाचारी या धर्मात्मा बनता है।

9. धर्म मनुष्य का ईश्वर से सीधा सम्बन्ध जोड़ता है और मोक्ष प्राप्ति निमित्त धर्मात्मा अथवा सदाचारी बनना अनिवार्य बतलाता है परन्तु मत मुक्ति के लिए व्यक्ति को पन्थाई अथवा मती का मानने वाला बनना अनिवार्य बतलाता है और मुक्ति के लिए सदाचार से ज्यादा आवश्यक उस मत की मान्यताओं का पालन बतलाता है।

10. धर्म सुखदायक है इसके विपरीत मत दुखदायक है।

11. धर्म में बाहर के चिह्नों का कोई स्थान नहीं है क्योंकि धर्म लिंगात्मक नहीं है-**न लिंगम् धर्मकारणम्** अर्थात् लिंग (बाहरी चिह्न) धर्म का कारण नहीं है परन्तु मत के लिए बाहरी चिह्नों का रखना अनिवार्य है जैसे एक मुसलमान के लिए जालीदार टोपी और दाड़ी रखना अनिवार्य है।

12. धर्म दूसरों के हितों की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति तक देना सिखाता है जबकि मजहब अपने हित के लिए अन्य मनुष्यों और पशुओं की प्राण हरने के लिए हिंसारूपी कुर्बानी का सन्देश देता है।

शंका : क्या धर्म अफीम है जैसा कार्ल मार्क्स ने बताया है?

"Religion is the sign of the oppressed creature, the heart of a heartless world, and the soul of soulless conditions. It is the opium of the people."

उत्तर : कार्ल मार्क्स ने धर्म के स्थान पर मत को धर्म का स्वरूप समझ लिया। जैसा उन्होंने देखा और इतिहास में पढ़ा उसको देख कर तो हर कोई धर्म के विषय में इसी निष्कर्ष पर पहुँचेगा जैसा मार्क्स ने बतलाया। उन्होंने अपने चारों और क्या देखा ? मुस्लिम आक्रांताओं द्वारा यूरोप, एशिया में इस्लाम के नाम पर भयानक तबाही, चर्च के पादरियों द्वारा धर्म के नाम पर सामान्य जनता पर अत्याचार को देखने पर उनका धर्म से विश्वास उठ गया इसलिए कार्ल मार्क्स ने धर्म को अफीम की संज्ञा दे दी। जैसे अफीम को ग्रहण करने के पश्चात मनुष्य को सुध-बुध नहीं रहती वैसा ही व्यवहार धर्म के नाम पर मत को मानने वाले करते हैं। धर्म अफीम नहीं है अपितु उत्तम आचरण है इसलिये धर्म को अफीम कहना गलत है, मत को अफीम कहने में कोई बुराई नहीं है।

धर्म और मत के अंतर को ठीक प्रकार से समझ लेने पर मनुष्य अपने चिंतन मनन से आसानी से यह स्वीकार करके श्रेष्ठ कल्याणकारी कार्यों को करने में पुरुषार्थ करना धर्म कहलाता है इसलिए उसके पालन में सभी का कल्याण है।

- डॉ. विवेक आर्य
शिशु रोग विशेषज्ञ, नई दिल्ली

'सरस्वती महोत्सव' में राज्य में द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाली कविता

भारत पर्वत, झरनों, पावन नदियों का देश
जन्में यहाँ कृष्ण-राम, ऋषि-मुनि व दरवेश
सरस्वती सलिला के तट बैठ हुआ मस्तिष्क-मंथन
धारा भारत ने विश्व-गुरु का वेश।
आर्यावर्त में जन्म मिले, नहीं रहती इच्छा शेष
माँ-सरीखी नदियाँ यहाँ, मन में सदैव मोह, उन्मेष
अन्न धात्री, कंचन बरसाती मिटाती थी सब क्लेश,
धारा भारत ने विश्व-गुरु का वेश।
आध्यात्मिकता के ज्ञान से चमत्कृत हुआ देश-विदेश
शृंगार करने आए थे छात्रों का स्वयं ब्रह्मा, विष्णु व महेश
सरस्वती के तट पर हुई संस्कृति-सभ्यताएं पोषित
धारा भारत ने विश्व-गुरु का वेश।

सुनों चरक, सुश्रुत, चाणक्य व योगिराज का सन्देश
भगत, आजाद की वसुन्धरा पर हुआ गीता-उपदेश
सरस्वती की कल-कल धाराओं में बना इतिहास
धारा भारत ने विश्व-गुरु का वेश।
वेदों, उपनिषदों की रचना यहीं, विश्व में ये देश विशेष
पराक्रम के पर्याय बने हनुमान, एकलव्य व गुडाकेश
उदकवती के तटों पर पला ये राष्ट्र मेरा
धारा भारत ने विश्व-गुरु का वेश।

रचयिता
ब्र. आर्यन
कक्षा 8वीं, गुरुकुल कुरुक्षेत्र

अग्नि की महिमा

ऋग्वेद में अग्नि और इन्द्र से सम्बद्ध मन्त्रों की संख्या सबसे अधिक है। दोनों देवता एक-दूसरे के पूरक हैं किन्तु फिर भी अग्नि देवता का स्थान सर्वप्रथम है। अग्नि नाम ही इस बात का संकेत है कि वह अग्रणी है। वह स्वयं आगे रहता है और सबको आगे ले चलता है। यही कारण है कि ऋग्वेद का आरम्भ भी अग्नि-सूक्तों से हुआ है। इतना ही नहीं प्रथम सूक्त का प्रथम मन्त्र का प्रथम पद अग्नि ही है-**'अग्निमीळपुरोहितम्'...।** यही क्यों? ऋग्वेद का प्राप्तकर्ता ऋषि भी अग्नि ही है। जब पिण्ड-पुरुष में ब्रह्माण्ड-पुरुष की देवता अवतरित हुई तो अग्नि ही अग्रणी था।

ऐतरेयोपनिषद् 30.1.2.4 में लिखा है-**'अग्निर्वाग् भूत्वा मुखं प्राविशत्।'** यह बात स्वाभाविक भी थी, क्योंकि पुरुषसूक्त ऋक् 10.90.13 में कहा गया है- **'मुखादग्निरजायत'** अर्थात् ब्रह्म के मुख से अग्नि का जन्म हुआ और वही अग्नि वाक् बनकर समाज-पुरुष के मुख ब्राह्मण में आ बैठा। सृष्टि के आरम्भ में भी अग्नि ऋषि ऋग्वेद बनकर अन्य ऋषियों के मुख में आ बैठा और तभी कहा कि :-

अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत।
स देवान् इह आ वक्षति ।।
(ऋग्वेद 1.1.2)

यही कारण है कि प्रात:काल ब्रह्ममुहूर्त में प्रत्येक सद्‌गृहस्थ पुकार उठता है :-

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रा वरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातस्सोममुत रुद्रं हुवेम।।
(यजुर्वेद, 34.34)

यही क्यों? नहा-धोकर संध्या में निमग्न व्यक्ति मनसापरिक्रमा मन्त्रों से अपनी दशा पर विचार करने लगा तो प्राची (आगे) बढने की दिशा में अग्नि को और दक्षिणा (समृद्धि) की अवस्था के लिए इन्द्र को अधिपति बना बैठा। अग्नि अधिपति ही नहीं वह तो पुरोहित भी है, आदर्श भी है। हर व्यक्ति उसकी आकृति को अपने में उतारना चाहता है। उसकी योग्यता का क्या कहना! विभिन्न स्वभाव के लोगों से काम लेना जानता है, ऋत्विक् जो ठहरा! ऋतुना ऋतुना यजति इति ऋत्विक: ऋतु-ऋतु से यजन करता है, ग्रीष्म से भी, शरद् से भी, वर्षा से भी, वसन्त से भी। वही है जो वसन्त को आज्य, ग्रीष्म को इध्म, शरद् को हवि बनाता है। संगठन के सब व्यक्तियों को बुलाता है, **'होता'** जो ठहरा! यह योग्यता उसमें इसलिए है कि वह अतिशय रत्नों को धारण करने वाला है। इसी विश्वास पर तो ऋग्वेद की समाप्ति पर परिवार, समाज अथवा राष्ट्र अपने इन्द्रस्पद अग्नि को स्मरण कर कह उठता है :-

सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इडस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर।।
(ऋग्वेद 10.191.1)

इस प्रार्थना पर ही तो अग्निदेव ने कहना आरम्भ किया :-

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
(ऋक् 10.191.2)

अग्निदेव की अनन्त योग्यताएँ हैं उसमें ताप है, प्रकाश है, समर्पण है और है सबको जोड़ने की शक्ति। इसीलिए उस सामान्य ईन्धन का नाम समिधा पड़ गया। ऋचा में कहा भी है :-

सम्यञ्चो अग्निं सपर्यतारानाभिमिवाभितः।
(ऋक् 1.191.4)

(यही वह नाभि है जिसमें समिधाएँ अरों की भाँति सब ओर से जुड़ जाती हैं। इसी कारण वह अपने अनुयायियों से कहता है :-

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।
(ऋक् 10.191.4)

इसी तरह यजुर्वेद 1.1 का मन्त्र देखिये :-

देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणे।
मा वः स्तेन ईशत।

अग्नि ऋषि ने कहा वायवस्थ अर्थात् वायु देवता के माध्यम से प्राप्त यजुर्वेद के आदेश का पालन करो। मैं तो सविता देव से, प्रेरणा के देवता से, यही कहूँगा कि वह सविता देव तुम्हें श्रेष्ठतम कर्म के लिए प्रेरित करे। श्रेष्ठतम कर्म एकमात्र यज्ञ है और यज्ञों का मुख अग्निहोत्र है। याज्ञवल्क्य कह रहे हैं:-

एतद् वै यज्ञानां मुखं यदग्निहोत्रम् ।
(शतपथ ब्राह्मण 14.3.1.29)

आप जानते हो कि अग्निहोत्र पंचमहायज्ञों में परिगणित है, जो तुम्हारे लिए नित्यकर्म है। उसमें ही सर्वप्रथम मुझे ही आधान करना होगा, मैं ही सब देवों में अमृत हूँ। ऐ यजमान! मेरा ही आचमन करना होगा, मेरा ही बिछौना (उपस्तरण) मेरा ही ओढना (अपिधान) बनाना होगा, तब मैं सत्य,यश और श्री रूप में अमर बनकर तुझमें निवास करूँगा। जिस प्रकार ऋग्वेद के अन्त में मुझसे प्रार्थना की थी उसी प्रकार यजुर्वेद 40.16 के अन्त में भी मुझसे ही प्रार्थना करना अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् । इतना ही नहीं, सामवेद के प्रथम सूक्त के प्रथम मन्त्र (1.1 के मन्त्र) द्वारा प्रार्थना करना :-

अग्न आयाहि वीतये, गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि।।

अच्छे कर्म का फल अच्छा तथा बुरे कर्म का फल बुरा होता है।

अनन्ता वै अग्नय:

यह अग्नि नाम भौतिक पदार्थ के लिए ऐसा रूढ़ हो गया है कि बहुत कठिनाई से समझाया जा सकता है कि अग्नि का अर्थ भौतिक वह्नि के अतिरिक्त कुछ और भी होता है। आचार्य यास्क इस शब्द का निर्वचन करते हुए लिखते हैं- अग्नि: अग्रणीर्भवति । अग्नि को अग्नि इसलिए कहते हैं कि वह आगे ले चलता है, हमें ध्येय तक पहुँचा देता है।

अँधेरे में हमारा पथ-प्रदर्शक कौन होता है? यही अग्नि तो ! यही वह्नि (टार्च) ही तो -**वहति च नयति च।** अन्धे अपनी लाठी के सहारे या किसी छठी इन्द्रिय की बदौलत ही ध्येय तक पहुँच जाते हैं। यह लाठी, यह बुद्धि उनकी अग्नि हुई। बूढ़े की लाठी होता है उसका पोता। वेद में अग्नि का एक रूप शिशु भी है। प्रज्ञाचक्षुजनों की आत्माग्नि प्रबल होती है। अबोध बालक का नयन उसका आचार्य होता है, उसका कुलगुरु होता है, कुलपति होता है। प्रज्ञा का पथ-प्रदर्शक अग्नि-प्रजापति, राष्ट्रपति, सम्राट् और परिव्राट् संन्यासी होता है। इसी प्रकार अन्यान्य क्षेत्रों में सेनापति, राजदूत, निशापति और दिवापति की स्थिति होती है। स्वानुभव हमें कितनी ही अग्नियों को इस छोटे-से पिण्ड में प्रत्यक्ष करा देता है। शब्दवेधी शब्द से दिशा का ज्ञान पा लेता है **अनन्ता वै अग्नय:।**

प्रत्येक अग्नि के दो छोर होते हैं एक चक्षु और दूसरा लक्ष्य। अग्नि यदि इन छोरों तक व्यापक न बन जाए, तो कोई भी नीयमान अपने उद्दिष्ट लक्ष्य तक कभी भी पहुँच न पाए। अग्नि के इस व्यापक रूप को यदि हम आत्-इति-अ=आदित्य संज्ञा दे दें तो कोई आपत्ति न होगी। वस्तुत: अग्नि प्रकाश का एक जादू ही तो है। आदित्य की प्रकाश-रश्मियाँ हमारी नयन-रश्मियों के सम्पर्क में आकर दृश्य-जगत् को प्रत्यक्ष करा देती हैं। प्रकाश, ताप और समर्पण अग्नि के धर्म हैं। धर्म अपने धर्मी से अलग नहीं रह सकता। इन तीनों में से एक के भी अभाव में अग्नि का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। प्रकाश और ताप इसके समर्पण पर निर्भर हैं। इसके समर्पण का भी क्या कमाल है कि अन्तिम क्षण तक अपने (समिधा) शरीर का अणु-अणु कटाकर भी प्रकाश और ताप की रक्षा करता है। अपने शरीर को भस्म बनाकर भी नीयमान को लक्ष्य तक पहुँचाने की चिन्ता करता है। बस, यही तीनों तत्त्व प्रत्येक अग्रणी (अग्नि) में होने अनिवार्य हैं। इस सारे विवेचन से यह स्पष्ट हो गया कि अग्नि पद केवल आग का ही वाचक नहीं, अपितु प्रत्येक उस व्यक्ति का वाचक है जो अपने नीयमान को उसके लक्ष्य तक पहुँचा रहा है। इस स्थापना को प्रमाणित करने के लिए शतपथ का एक कथानक उपस्थित करते हैं।

शतपथ का कथानक : अग्नि ही अमर है

कहते हैं कि देव और असुर दोनों में बहुत स्पर्धाएँ चली। वे दोनों अनात्मज्ञ थे, मरणधर्मा थे। अनात्मज्ञ होना ही मरणधर्मा होना है। उन देव और असुर दोनों में अग्नि ही अमृत था। उसी के आश्रित वे अमृतत्व का उपभोग कर रहे थे। सो जो इसे मार देता है, वह भी स्वयं मर जाता है। एक समय आया कि देव अत्यल्प संख्या में रह गए। उन्होंने सोचा कि अर्चना और श्रम करते हुए अपने प्रतिद्वन्द्वी असुरों का पराभव करें। उन्हें सूझा कि क्यों न इस अग्नि को अपने अन्तरात्मा में आधान करके स्वयं अमर हो जायें और शत्रुओं को पराजित कर दें। उनमें से कुछ बोले कि यह अग्नि तो देव और असुर दोनों में ही तुल्य है। यदि कहीं असुरों ने भी इसे आधान कर लिया तो कौन-किसको अभिभव कर सकेगा ? देव बोले असुरों को इस रहस्य का ज्ञान ही नही कि किसी अग्नि को अन्तरात्मा में ही आधान किया जाता है। यदि विश्वास न हो तो उनसे चलकर पूछ लें। यही किया गया।

ज्यों ही असुरों से जाकर पूछा कि तुम अग्नि का क्या करोगे? असुर बोले कि क्या करेंगे? उसे काबू में लाकर कहेंगे कि लो लकडी जलाओ, चावल पकाओ, मांस पकाओ। असुरों ने जिस अग्नि का आधान किया था, उससे मनुष्य अपना भोजन पकाते हैं। दोनों को इस रहस्य का पता लगना था कि उन्होंने अग्नि को अन्तरात्मा में आधान कर लिया, अपने प्रतिद्वन्द्वी असुरों को दबा लिया। बस, जो भी इस रहस्य को जानकर अमृत को अपने अन्तरात्मा में कर लेता है, वह अमर हो जाता है। इसके सिवाय अमर होने का अन्य उपाय नहीं। मर्त्य से अमृत होने का यही मार्ग है। आहिताग्नि और अनाहिताग्नि के इस मौलिक भेद को अभी आधुनिक विज्ञान ने भी स्वगत करना है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो गया कि भोजन पकाने वाली अग्नि चूल्हे में आहित की जाती है, जबकि असुरों का अभिभव करने वाली अमृत-अग्नि हृदय-कुण्ड में आहित की जाती है। बस, उसी का नाम श्रद्धा, दीक्षा, संकल्प अथवा व्रताग्नि है।

– **आचार्य प्रवीण शास्त्री**

गुरुकुल-दर्शन के सदस्य ध्यान दें

गुरुकुल-दर्शन के सभी पाठकों से विनम्र अनुरोध है कि जिन पाठकों की सदस्यता अवधि समाप्त हो चुकी है, वे आगामी सदस्यता हेतु निर्धारित राशि डाक अथवा बैंक द्वारा भेजकर अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करा लें अन्यथा भविष्य में वे गुरुकुल-दर्शन के आगामी अंक प्राप्त नहीं कर पायेंगे।

– **व्यवस्थापक,** गुरुकुल-दर्शन

आत्मा का शुभ परिणाम पुण्य और अशुभ परिणाम पाप है।

बच्चों को दें अच्छे संस्कार

मनमोहन आर्य

आज का युग आधुनिक युग कहलाता है जहाँ क्या वृद्ध, क्या युवा और क्या बच्चे, सभी पाश्चात्य संस्कारों में दीक्षित हो रहे हैं। दूर के ढोल सुहावने की भांति बिना जाने समझे पाश्चात्य जीवन शैली उन्हें अच्छी लगती है और वेशभूषा और विचार ही नहीं भाषा और भोजन आदि भी बिगड़ गया है। यह लोग भारतीय वैदिक संस्कृति से दूर होकर अपने जीवन की सुख शान्ति भंग कर लेते हैं और बाद में रोगी व तनाव से ग्रस्त होकर असमय मृत्यु का ग्रास बनते हैं। आज की युवा पीढ़ी आध्यात्मिक मूल्यों से सर्वथा शून्य देखी जाती है। किसी को न तो वेद और उसकी शिक्षाओं सहित उनके महत्त्व का ज्ञान है और न ही ईश्वर व आत्मा के स्वरूप का ज्ञान है। आज की युवा पीढ़ी को जीवन के लक्ष्य व उद्देश्य का भी पता नहीं है। उन्हें यह भी पता नहीं कि उनका यह जन्म उनके पूर्वजन्म का पुनर्जन्म है और इस जन्म में जब भी उनकी मृत्यु होगी उनके ज्ञान, संस्कार और कर्मानुसार उनका पुनः पुनर्जन्म अर्थात् नया जन्म होगा। जन्म-मरण और पुनर्जन्म की यह यात्रा हमेशा चलती रहेगी। इसे विश्राम मिलेगा तो प्रलय अवस्था में या फिर मोक्ष की अवस्था में। यही कारण है कि महाभारतकाल से पूर्व के समय में हमारे देश में वेदों के आधार पर मनुष्यों की जीवन शैली हुआ करती थी और उस समय सभी लोग वैदिक रीति से गुरुकुलों में पढ़ते थे और उनको वेद में वर्णित ईश्वर व आत्मा के सत्य स्वरूप सहित अपने कर्तव्य-कर्मों का ज्ञान होता था और उसके अनुसार ही उनका आचरण भी हुआ करता था।

सन्तान वैदिक संस्कारों से युक्त हो इसके लिए ऋषि दयानन्द ने वेद के आधार पर मनुष्य के गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त 16 संस्कारों का विधान किया है। यदि माता-पिता चाहते हैं कि उनके घर में संस्कारित सन्तान आये तो उन्हें सन्तान के जन्म से बहुत पहले अपने आचार व विचारों पर ध्यान देना होगा। उन्हें वैदिक धर्म व संस्कृति का अध्ययन कर उसकी मान्यताओं एवं सिद्धान्तों पर आचरण करना होगा। यदि वह ऐसा करते हैं अर्थात् वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार अपना जीवन बनाते हैं तो अनुमान किया जा सकता है कि उनके घर में संस्कारवान् आत्मा पुत्र व पुत्री के रूप में जन्म ले सकती है। इसमें एक मुख्य बात यह होती है कि अच्छी सन्तान की प्राप्ति के लिए माता-पिता को संयमित जीवन व्यतीत करना चाहिये। इसी को ब्रह्मचर्य कहा जाता है। ब्रह्मचर्य में संयम के साथ जीवन व्यतीत करते हुए वेदों का अध्ययन करना व ईश्वरोपासना आदि कर्मों का अनिवार्य रूप से आचरण करना आवश्यक होता है। ऋषि दयानन्द ने गर्भाधान संस्कार का विधान संस्कारविधि पुस्तक में किया है जो इस विषय के प्राचीन आचार्यों के विधानों के अनुकूल है। इसे विस्तार से जानने के लिए संस्कारविधि में इस संस्कार का अध्ययन करना चाहिये। संस्कारविधि पर आर्यसमाज के उच्च कोटि के कीर्तिशेष विद्वान् स्वामी विद्यानन्द सरस्वती जी ने संस्कार भास्कर टीका लिखी है। वहाँ इस संस्कार के समर्थन में अनेक जानकारियाँ एवं प्रमाण दिये गये हैं। उसका अध्ययन करने से लाभ होता है। सुसन्तान के निर्माण के लिए माता-पिता को अपनी सन्तान के पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन एवं वेदारम्भ संस्कार भी कराने चाहिये। श्रेष्ठ बालक व बालिका के निर्माण के लिए माता-पिता को आधुनिक शिक्षा सहित उन्हें संस्कृत भाषा, व्याकरण सहित वेदादि ग्रन्थों का अध्ययन भी कराना चाहिये। पाठ्य ग्रन्थों में सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय एवं व्यवहारभानु आदि ग्रन्थ भी सम्मिलित हैं।

आर्यसमाज के अनेक विद्वानों महात्मा नारायण स्वामी, स्वामी ब्रह्ममुनि, स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती आदि ने लघु ग्रन्थों की रचनायें की हैं। उनकी शिक्षा व पाठ भी बच्चों को कराया जाना चाहिये। बच्चों को योगासनों सहित ध्यान का अभ्यास भी कराया जाये तो यह उनके जीवन में उपयोगी होता है। बच्चों को भोजन में देशी गाय का दुग्ध व यथोचित मात्रा में फलों का सेवन भी कराया जाना चाहिये। माता-पिता द्वारा सदाचार के नियमों की शिक्षा भी बच्चों को दी जानी चाहिये। बच्चे जीवन में चोरी, व्यभिचार, असत्य कथन आदि न करें, इसके दुष्परिणामों से भी बच्चों की बौद्धिक क्षमता के अनुसार ज्ञान दिया जाना चाहिये। बच्चों को बचपन से ही माता-पिता द्वारा अपने साथ बैठाकर सन्ध्या व यज्ञादि कराये जाने चाहियें। इससे बच्चे इन्हें सीख जाते हैं और उन पर अच्छे संस्कार पड़ते हैं। बच्चों को स्वाध्याय की आदत भी डालनी चाहिये। माता-पिता उन्हें बच्चों से सम्बंधित किसी वैदिक

सदाचार की पुस्तक का वाचन करने के लिए कह सकते हैं और उसकी बातों को उन्हें समझा भी सकते हैं। यह बातें देखने में तो मामूली हैं परन्तु इनका प्रभाव सारे जीवन भर रहता है।

बच्चों को व्यायाम व योगासन भी सीखाने आवश्यक हैं। यह अभ्यास भी उनके बलशाली व स्वस्थ जीवन का आधार बनता है। बच्चों को अच्छे विचार ही मिलें, बुरे विचार न मिलें, इसके लिए बच्चों को बुरे स्वभाव वाले अध्यापकों व पारिवारिक जनों की संगति से दूर रखें। उन्हें पढ़ाने वाले अध्यापक व अध्यापिकायें सज्जन व चरित्रवान् हों। उनका व्यवहार अपने शिष्यों पर माता-पिता व आदर्श आचार्य के अनुरूप होना चाहिये। बच्चे जब कुछ बड़े हों और उनमें समझने की क्षमता हो तो उन्हें मूर्तिपूजा के दोषों के बारे में भी संक्षिप्त रूप से बता देना चाहिये। बच्चे बड़े होकर फलित ज्येतिष व जाति-पाति आदि अनुचित विचारों व व्यवहारों में न फंसे, इसका भी आवश्यकतानुसार ज्ञान बच्चों को कराया जाना चाहिये। माता-पिता को अपने सन्तानों को टीवी, मोबाइल आदि की लत से भी बचाना चाहिये। वह कम्प्यूटर व इंटरनेट आदि का दुरुपयोग न करें व कुसंगति में न फंसे, इसका भी उन्हें विशेष ध्यान रखना है। बच्चों को यह बताया जाना चाहिये कि उन्हें अपने माता-पिता सहित सभी आचार्यों एवं बड़ों के प्रति आदर भाव रखना है व उन्हें सम्मान देना है।

यदि इतना भी हम करते हैं तो हमें लगता है कि यह बच्चे की उन्नति व सर्वांगीण विकास में सहायक हो सकता है। बचपन में ही बच्चों को बाल सत्यार्थप्रकाश व बाल ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित ऋषि दयानन्द कृत व्यवहारभानु व संस्कृत वाक्य प्रबोध का अध्ययन कराया जाना चाहिये। इन ग्रन्थों की शिक्षाओं से बच्चों को परिचित करा देना लाभदायक होता है। यदि बच्चे बचपन में इन चार ग्रन्थों को पढ़ व समझ लेंगे तो इससे उन्हें जीवन भर अनेक प्रकार से लाभ होगा और वह अज्ञान व अन्धविश्वासों से बच सकते हैं। इस प्रकार से माता-पिता अपने बच्चों का निर्माण करें और साथ ही संस्कृत व हिन्दी के अध्ययन सहित आधुनिक विषय अंग्रेजी, गणित, विज्ञान, इंजीनियरिंग, मेडिकल शिक्षा आदि का अध्ययन करें तो भी वह जीवन में सफल हो सकते हैं। हम आशा करते हैं कि आज के समय में यदि माता-पिता अपने बच्चों के निर्माण में उपर्युक्त बातों का ध्यान रखेंगे तो उनके बच्चों को लाभ होगा। हमने कुछ प्राथमिक बातें ही लिखी हैं। इन्हें जान लेने व बड़े होने पर अच्छे आर्यसमाजों में जाने से हम समझते हैं कि बच्चे व समाज दोनों को ही लाभ होगा।

– मनमोहन कुमार आर्य
196, चुक्खूवाला-2, देहरादून 20081, मो-9412985121

आर्य भजनोपदेशक प्रशिक्षण केन्द्र, गुरुकुल कुरुक्षेत्र

'आर्य भजनोपदेशक प्रशिक्षण केन्द्र' का भव्य स्वरूप

आर्यसमाज अपने स्थापना काल से ही सामाजिक रूढ़ियों, पाखण्ड, अन्धविश्वास, गुरुड़मवाद पर कड़ा प्रहार करता रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप समाज में अनेक प्रकार के परिवर्तन देखने को मिलते हैं। जहाँ तपस्वी विद्वानों ने अपना सर्वस्व अर्पण कर भारतीय संस्कृति के आधार वेद का प्रचार-प्रसार करने में अपनी कोई लाभ-हानि नहीं देखी, वहीं गीत, भजन व उपदेश के माध्यम से दादा बस्तीराम जी, चौधरी पृथ्वीसिंह बेधड़क जी, मंगल वैद्य जी, स्वामी भीष्म जी जैसे अनेक भजनोपदेशकों ने अपनी जान हथेली पर रख कर वेद का प्रचार-प्रसार किया।

आचार्य देवव्रत जी महामहिम राज्यपाल, हिमाचल प्रदेश के मन में हमेशा से ही यह भाव रहा है कि गांव, देहात में वेद का प्रारम्भिक प्रचार भजनोपदेशक के माध्यम से जितना कारगर हो सकता है उतना अन्य से नहीं। इसी भावना को मन में रखते हुए गुरुकुल कुरुक्षेत्र में **'आर्य भजनोपदेशक प्रशिक्षण केन्द्र'** की स्थापना की गई है। इस प्रशिक्षण केन्द्र पर विधिवत् प्रशिक्षण 01 **अप्रैल 2017** से प्रारम्भ हो चुका है। जो भी प्रशिक्षण प्राप्त करने का इच्छुक व्यक्ति है उसके आवास, प्रशिक्षण एवं भोजन की व्यवस्था गुरुकुल की ओर से नि:शुल्क रहेगी। प्रशिक्षण के बाद गुरुकुल के माध्यम से ही उचित मानदेय पर अपनी सेवा भी प्रदान कर सकेंगे। इच्छुक युवा व महानुभाव

कुलवंत सिंह सैनी, प्रधान गुरुकुल कुरुक्षेत्र
मोबाइल - 9996026304

नन्दकिशोर आर्य,
मो-94664 36220, 86890 01220

गुरुकुल कार्यालय,
01744-238048, 238648

विश्व शान्ति का एक ही मार्ग : वैदिक धर्म

जिस प्रकार सत्य एक ही होता है, असत्य अनेक हो सकते हैं। दो बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा केवल एक ही होती है, टेढ़ी-मेढ़ी अनेक हो सकती हैं। ठीक उसी प्रकार धर्म भी एक ही है। मत, पंथ, सम्प्रदाय अनेक हो सकते हैं। धर्म वह है जो केवल मानव मात्र ही नहीं अपितु प्राणिमात्र की भलाई व कल्याण चाहने वाला हो। किसी भी जीव के प्रति अन्याय, अत्याचार, पक्षपात न करता हो। सब प्राणियों का पिता केवल एक ईश्वर ही है, इसलिए जितने भी प्राणी हैं वे सभी उस परमपिता परमेश्वर की सन्तान है, उसी के पुत्र व पुत्रियाँ हैं। पिता अपने पुत्र-पुत्रियों को एक समान ही स्नेह करता है, इसलिए जो धर्म ईश्वरप्रदत्त होगा, वही सभी प्राणियों का हितकारी और कल्याणकारी होगा।

वेद ईश्वर की वाणी है इसलिए वैदिक धर्म अर्थात् वेदों के अनुसार चलने वाला धर्म ही पूर्ण मानवमात्र का धर्म है। अन्य जितने भी धर्म के नाम से प्रचलित मत, पंथ, सम्प्रदाय हैं वे सभी किसी 'व्यक्ति विशेष' द्वारा चलाए हुए हैं। मनुष्य एक अल्पज्ञ प्राणी है, वह चाहे कितना भी महान् क्यों न हो जाए, अल्पज्ञ होने के कारण उसमें कुछ न कुछ कमी, स्वार्थ अवश्य रहेगा। वह अपने मत वालों को अधिक पसन्द करेगा और दूसरे मत वालों को कम पसन्द करेगा और यही भेदभाव लड़ाई-झगड़े की जड़ है जो हमें एक-दूसरे से अलग करती है। सबसे बड़ा दु:ख का कारण भी यही भेदभाव है। विश्व में जितने भी मत या पंथ हैं वे सभी किसी व्यक्ति विशेष द्वारा ही चलाए गये हैं जैसे ईसाई मत ईसा ने चलाया था, मुस्लिम मत मोहम्मद ने, पारसी मत मूसा ने, सिख मत गुरु नानकदेव ने, जैन मत महावीर स्वामी ने, बौद्ध मत महात्मा बुद्ध ने चलाया। इन मतों से विश्व का कल्याण कभी नहीं हो सकता इसलिए इन मतों को मानने से विश्व में सुख व शान्ति कभी भी स्थापित नहीं हो सकती। अब प्रश्न उठता है कि वैदिक धर्म से ही विश्व में सुख और शान्ति कैसे स्थापित हो सकती है ? इसके कुछ प्रमुख कारण इस प्रकार हैं :-

1) **वैदिक** धर्म सृष्टि के आदि में ईश्वर प्रदत्त धर्म है, मनुष्य में स्वाभाविक ज्ञान कम और नैमित्तिक ज्ञान अधिक। पशु-पक्षियों में स्वाभाविक ज्ञान अधिक और नैमित्तिक ज्ञान बहुत कम होता है। स्वाभाविक ज्ञान वह है जो जीवन चलाने के लिए आवश्यक होता है जैसे खाना-पीना, सोना-जागना, उठना-बैठना, रोना-हंसना तथा सन्तान उत्पत्ति करना आदि। इन कामों का फल नहीं मिलता कारण यह हर जीवन के लिए करने जरूरी हैं। दूसरा ज्ञान है नैमित्तिक ज्ञान, यह सीखा जाता है। यह ज्ञान मनुष्य में अधिक है, इसलिए मनुष्य सीखाने से सीखता है। बिना सीखे वह मूर्ख ही बना रहता है। यही कारण है कि ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद हैं, यह चारों वेद चार ऋषियों जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा थे, उनके हृदय में चारों वेदों का प्रकाश किया और लोगों को सुनाया। वैसे तो चारों वेदों का सन्देश ऋषियों के मुख से सभी उपस्थित स्त्री-पुरुषों ने सुना किन्तु ब्रह्मा ऋषि ने उन चारों वेदों को कण्ठस्थ कर लिया और उन्होंने अपने शिष्यों व अन्य लोगों को सुनाया। इस प्रकार वेदों के सुनने-सुनाने की यह परम्परा आरम्भ हो गई।

जब तक कागज, स्याही, कलम, दवात का आविष्कार नहीं हुआ और वेद पुस्तक के रूप में नहीं आ पाये, तब तक सुनने-सुनाने की यह परम्परा चलती रही। पुस्तकों में लिखे जाने के बाद यह परम्परा प्राय: समाप्त हो गई यही कारण है कि वेदों को श्रुति भी कहते हैं जिसका तात्पर्य है सुन-सुनकर सीखना। ईश्वर ने वेदों में मनुष्य के लिए यही ज्ञान दिया है कि मनुष्य को क्या करना चाहिए और किन कार्यों से दूर रहना चाहिए। जिन कार्यों के करने से मुनष्य धर्म, अर्थ, काम को धर्मानुसार अर्थात् वेदानुसार करने से मोक्ष को प्राप्त कर सकता है जो मानव मात्र का अन्तिम लक्ष्य है, जिसके पाने के लिए ईश्वर जीवन को मनुष्य योनि में भेजता है। इसलिए हम कह सकते हैं कि वैदिक धर्म ही ऐसा धर्म है जिसके अनुसार चलने से मनुष्य अपने जीवन में स्वयं भी सुखी व प्रसन्न रह सकता है और दूसरों को भी प्रसन्न रख सकता है। वैदिक धर्म को ही संसार में सुख व शान्ति स्थापित करने वाला माना जाता है।

2) **वैदिक धर्म** ही प्राणिमात्र से प्रेम करने की बात कहता है और परस्पर प्रेम से रहने की बात सिखाता है। किसी से भेदभाव, ईर्ष्या, द्वेष आदि के लिए वैदिक धर्म में कोई स्थान नहीं है। वैदिक धर्म मानव मात्र का धर्म है, किसी एक जाति, देश या वर्ग का नहीं। ईश्वर सबका पिता है और यह धर्म उस पिता के द्वारा ही चलाया गया है। हम सब उस परमपिता परमात्मा के पुत्र-पुत्रियाँ हैं और हर पिता अपनी सन्तान का कल्याण और भला ही करना चाहता है। वेदों में इतिहास नहीं है, इसका मूल कारण यही है क्योंकि वेद आदिग्रन्थ है और इतिहास बाद में लिखा जाता है, आदि में नहीं।

3) **वेदों** में न कोई कुछ घटा सकता है और न कोई कुछ बढ़ा सकता है, कारण स्पष्ट है यह पूर्ण ज्ञान है और पूर्ण ज्ञानवान् ईश्वर द्वारा प्रदत्त हैं। हमारे धार्मिक ग्रन्थों में धूर्तों ने अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु काफी मिलावट कर दी परन्तु वेदों में ये स्वार्थी कोई मिलावट नहीं कर पाये और यह ईश्वरीय ज्ञान आज भी हमारे पास ज्यों का त्यों है। इस अद्वितीयता से यह भी सिद्ध होता है कि यह वेदज्ञान ईश्वर का दिया हुआ ही है।

4) **मानव** मात्र का धर्म वही हो सकता है जो सृष्टि के आरम्भ से चला हो। बाद में चला हुआ धर्म, मानव मात्र का नहीं हो सकता। कारण है उस धर्म के चलने से पहले भी कोई धर्म माना जाता होगा।

(शेष पृष्ठ 12 पर)

चित्त की वृत्तियों का निरोध

प्रकृति का नियम ही ऐसा है और मानव मस्तिष्क की रचना भी ऐसी ही है कि मनुष्य अपनी इन्द्रियों द्वारा जो देखता, सुनता, सूंघता, चखता और छूता है वह सब मस्तिष्क की स्मृतिकणों पर अंकित हो जाता है। नित्य असंख्य स्मृतिकण बनते रहते हैं, किन्तु पुराना एक भी स्मृतिकण नष्ट नहीं होता। एक-एक स्मृतिकण में अनेक दृश्यों, बोलियों, गन्धों, स्वादों और स्पर्शों के चित्र अंकित होते हैं। मन में जिस प्रकार का वेग या संकल्प उठता है, तब उसी विषय के चित्र साकार हो जाते हैं और इन साकार चित्रों के द्वारा भोगे हुए भोगों का स्मरण कर भोग करता है।

स्मृतियाँ दो प्रकार की हैं - एक **स्मृति विशेष** और एक **स्मृति शेष**। जिस स्मृति से स्मृत विषय भोगने की इच्छा जागृत होती है उसे स्मृति विशेष कहते हैं। स्मृति विशेष ही विषयों का चिन्तन कराती है। जिस स्मृति से घटना विशेष के कारण किसी भोगे हुए विषय का स्मरण हो तो जाता है, किन्तु स्मृत विषय के भोगने की इच्छा नहीं होती, उसे स्मृति शेष कहते हैं। स्मृति विशेष तब ही स्मृति शेष का रूप धारण करती है जबकि साधक साधना द्वारा अपने जीवन में विवेक का दीपक प्रदीप्त करता है।

वृत्तियाँ और संस्कार : अब वृत्तियों और संस्कार में क्या अन्तर है, इसका संक्षेप में उल्लेख कर दें। संसार के सभी व्यवहारों, स्थूल या सूक्ष्म ज्ञान, कर्म, विषयों और बर्ताव की छाप-सी जो अन्तःकरण के भाग 'चित्त' पर पड़ती है, उसे संस्कार कहते हैं। जब तक बुद्धि व्यवहार करती है और निश्चयात्मक ज्ञान व अनुभव नहीं बनता तब तक इसका नाम 'वृत्ति' है और जब इन वृत्तियों की छाप बनकर हृदय चित्त पटल पर जा पड़ती है तब इसका नाम संस्कार है। वृत्तियों का सूक्ष्म रूप में परिणत हुआ रूप ही संस्कार है। यह चित्त ही वृत्तियों व संस्कार का घर है। चित्त से क्लिष्ट वृत्तियों को प्रभावविहीन व क्षय करके अक्लिष्ट वृत्तियों को धारण करना और अभ्यास द्वारा इन अक्लिष्ट वृत्तियों को नियंत्रित तथा निरोध करना अथवा रोकना ही योग का मुख्य उद्देश्य है।

जिज्ञासु प्रश्न करते हैं कि यदि हम इन चित्त की वृत्तियों को रोकने के लिए योग का अभ्यास करें तो हमारे सामने कौन-कौन सी रुकावटें या विघ्न आयेंगे जिनका हमको दृढ़ता से सामना करना होगा। प्रसंगानुसार ठीक प्रश्न है। योग साधना में जो विघ्न आते हैं, उनकी चर्चा भी कर लेते हैं। योग दर्शन के पहले अध्याय के तीसवें सूत्र के अनुसार चित्त के नौ विघ्न हैं जो इस प्रकार हैं :-

व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादाऽऽलस्याऽविरतिभ्रान्तिदर्श
नाऽलब्धभूमिकत्वाऽनवस्थितत्त्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः।
(योगदर्शन, अध्याय 1, सूत्र 30)

योग साधना में रुकावटें : योग साधना में लगे हुए साधन के चित्त में निक्षेप अर्थात् चंचलता उत्पन्न करके उसको साधना से विचलित करने वाले ये नौ विघ्न माने जाते हैं जो इस प्रकार हैं :-

1) व्याधि : वात, पित्त, कफ, धातुओं का बिगड़ जाना और खाए-पीए आहार के रस की विषमता व इन्द्रियों की विषमता का नाम व्याधि है।

2) स्त्यान : अकर्मण्यता अर्थात् जी चुराना, साधना में रुचि न होना।

3) प्रमाद : योग साधना की अवहेलना करना, लापरवाही।

4) आलस्य : तमोगुण की अधिकता से भारीपन होना, प्रवृत्ति न लगना।

5) संशय : अपनी शक्ति, योग के फल में संदेह होना, दुविधा होना।

6) अविरति : विषयों के साथ इन्द्रियों का संयोग होना जिससे चित्त भ्रान्ति में होना, वैराग्य भाव कम होना।

7) भ्रान्तिदर्शन : योग के साधन को विपरीत समझना और मिथ्या ज्ञान होना।

8) अलब्ध भूमिकत्व : योग साधना से वास्तविक स्थिति का न पाना जिससे उत्साह कम हो जाना।

9) अनवस्थितत्व : किसी भूमि में चित्त की स्थिति होने पर भी उसका न ठहरना।

चित्त को बिगाड़ने वाले कुछ और विघ्नों अर्थात् रुकावटों का वर्णन करते हैं, जो कि योग दर्शन में वर्णित हैं।

दुःखदौर्मनस्यांगमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः।
(योगदर्शन, अध्याय 1, सूत्र 31)

इन पांच विघ्नों का वर्णन इस प्रकार है - दुःख, दौर्मनस्य, अंगमेजयत्व, श्वास और प्रश्वास।

क) दुःख - आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक, ये तीन प्रकार के दुःख हैं। प्रथम आध्यात्मिक दुःख जो कि काम, क्रोध, घृणा, राग द्वेष आदि के कारण मन, इन्द्रिय व शरीर में पीड़ा करता है। दूसरे आधिभौतिक दुःख जो दूसरों द्वारा मनुष्य, पशु, पक्षी, शेर, सांप, मच्छर आदि जीवों के कारण होता है। तीसरे आधिदैविक जो प्राकृतिक विपत्तियों के कारण पीड़ा होती है जैसे सर्दी, गर्मी, भूकम्प आदि।

ख) दौर्मनस्य - इच्छा की पूर्ति न होने पर मन में जो क्षोभ होता है उसे दौर्मनस्य कहते हैं।

ग) अंगमेजयत्व - शरीर में कंपन से भी चित्त में विघ्न होता है।

घ) श्वास - बिना इच्छा के शरीर की वायु का भीतर प्रवेश कर जाना अर्थात् बाहरी कुम्भक में विघ्न होना।

ङ) प्रश्वास - बिना इच्छा के ही भीतर की वायु का बाहर निकल जाना अर्थात् भीतरी कुम्भक में विघ्न होना।

ये विक्षेप चंचल चित्त वालों को ही होते हैं और सावधान चित्त में नहीं होते। ये पाँच विघ्न पहले दर्शाए गये नौ विघ्नों के सहायक विघ्न हैं।

वृत्ति निरोध के उपाय : अब इन वृत्तियों को रोकने या नियंत्रण करने के उपायों पर चर्चा बहुत ही स्वाभाविक है क्योंकि जब तक उपायों की ही कोई जानकारी न होगी तो योग में सफलता भी कैसे प्राप्त होगी। चित्त की वृत्तियों को रोकने के लिए या नियंत्रित करने के लिए महान योगी पतंजलि ऋषि ने अपने योगदर्शन में, कपिल ऋषि ने अपने सांख्य दर्शन में और महान योगी श्रीकृष्ण जी ने गीता में दो ही मुख्य उपायों का वर्णन किया है- एक वैराग्य और दूसरा अभ्यास। **योग दर्शन** के सूत्र अनुसार -

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः।

(योगदर्शन, अध्याय 1, सूत्र 12)

चित्त की वृत्तियों का निरोध करने के लिए अभ्यास और वैराग्य ये दो उपाय हैं। चित्त वृत्तियों का प्रवाह परम्परागत संस्कारों के बल को सांसारिक भोगों की ओर चल रहा है। उस प्रवाह को रोकने का उपाय वैराग्य है और उसे कल्याण मार्ग में ले जाने का उपाय अभ्यास है। यह चित्त रूपी नदी दो ओर बहने वाली है। पुण्य के लिए भी ओर पाप के लिए भी। जो मोक्ष की ओर बहने वाली है, उसका विवेक विषय बहने का स्थान है, वह पुण्य बहाव है और जो बहाव सांसारिक भोगों की ओर है उसका अविवेक विषय बहने का स्थान है वह पापावहा फल वाली है।

वैराग्य तो एक बांध है जो कि सांसारिक भोगों के प्रवाह को बन्द करके मोक्ष की ओर बहने वाले प्रवाह विवेक को उभारता है। जिस प्रकार नदी से निकलने वाली दो नहरों में से एक नहर बन्द करने के लिए तख्ते डाले जाते हैं और दूसरी नहर में जल छोड़ दिया जाता है, तो पहली नहर जिसमें तख्ता लगा दिया है, सूख जाती है। दूसरी नहर तीव्रता से बहने लगती है। इसी प्रकार वैराग्य रूपी तख्ते से चित्त रूपी नदी की पापवहा नहर को बन्द करके पुण्य या कल्याणवहा नहर को खोल निरन्तर ईश्वर रूपी यन्त्र से अभ्यास होता है।

वैराग्य दो प्रकार से होता है। एक तो किसी वस्तु के दोष दर्शन द्वारा उस वस्तु में घृणा रूपी वैराग्य हुआ करता है, वह अपर कोटि का वैराग्य है। इसमें सांसारिक विषयों तथा भोग सामग्री में दुःखों का अनुभव करके उससे चित्त तृष्णारहित हो जाता है। दूसरे गुण-दर्शन द्वारा पूर्व की दोषयुक्त वस्तु को देख पाप करने की कामना भी न करना, यह पर वैराग्य है जो पहले से श्रेष्ठ है। उदाहरण के तौर पर किसी बालक को लाल मिर्च खाने पर मुंह जल जाने, आंखों में पानी आने और आंतों में गर्मी आदि दोष को देखकर लाल मिर्च से घृणा रूपी वैराग्य हो गया। यह वैराग्य दोष दर्शन के कारण होता है।

जब इस बालक को मिर्च के स्थान पर कोई मीठा फल या मिठाई मिल जावे, जिसके खाने से मुख में उत्तम स्वाद, आंखों में तरावट, मन में सन्तोष और आनन्द प्राप्त हो तो इस प्रकार गुण-दर्शन द्वारा उस लाल मिर्च की ओर से सर्वथा अलग रहना 'पर' वैराग्य है। यह उत्कृष्ट वैराग्य है। इस उदाहरण से यहाँ समझना चाहिए- अपर वैराग्य हुआ सांसारिक विषयों से उनके दोष दर्शन द्वारा, दूसरा पर वैराग्य हुआ अभ्यास और समाधि द्वारा। विवेक, ज्ञान की प्राप्ति से आत्मदर्शन और परमात्मा दर्शन के आनन्द से सांसारिक विषयों और प्रकृति के तीन गुणां (सत्त्व, रज, तम) और इसके कार्यों में तृष्णा नहीं रहती, सर्वथा निष्काम हो जाता है, ऐसी राग रहित अवस्था पर वैराग्य है।

श्री हरिवंश वानप्रस्थी

तपोभूमि योग साधना केन्द्र, लोहारी पानीपत (हरियाणा)

विश्व शान्ति का एक... पृष्ठ १० का शेष

बाद में किसी व्यक्ति द्वारा चलाया हुआ धर्म, धर्म न होकर कोई मत, पंथ व सम्प्रदाय ही है जो कोई वर्गविशेष द्वारा माना जाता है इसलिए वैदिक धर्म जो सृष्टि के आरम्भ से चला हुआ है वही मानव मात्र का धर्म है, अन्य नहीं।

5) वेद किसी देशीय भाषा में नहीं है, वेद संस्कृत भाषा में है जो सब भाषाओं की जननी है और सृष्टि के आरम्भ की भाषा है। अन्य धर्मग्रन्थ किसी देशीय भाषा में हैं, इसलिए वह मानव-मात्र का धर्म नहीं हो सकता।

6) वेद, प्रकृति के अनुसार हैं, प्रकृति के विरुद्ध वेदों में कोई बात नहीं है। जैसे एक व्यक्ति इतना योगी, तपस्वी, पहुंचा हुआ संन्यासी है जो एक समय में ही मुम्बई, कलकत्ता, मद्रास और दिल्ली दिखाई देता है, यह बात प्रकृति-विरुद्ध है। एक व्यक्ति एक समय में एक ही जगह हो सकता है। मनुष्यों द्वारा चलाये गये मत व पंथों में अपना चमत्कार दिखाने के लिए प्रकृति विरुद्ध बातें बतलाते हैं जैसे ईसाई मत के लोग कहते हैं कि ईसा की शरण में आ जाओ, तुम्हारे सारे पाप धुल जाएंगे और तुम मोक्ष के अधिकारी बन जाओगे। मुस्लिम कहते हैं मोहम्मद साहब ने चिटली उंगली से चांद के दो टुकड़े कर दिये। पौराणिक भाई इस मामले में सबसे आगे हैं। वे तो कहते हैं कि हनुमान ने बचपन में ही सूर्य को अपने मुख में बंद कर लिया था, कुन्ती ने कान से कर्ण को जन्म दिया था, भगवान श्रीकृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को चिटली उंगली से उठा लिया था। यह सब काम प्रकृति के विरुद्ध है, असम्भव है। यह कोरा अंधविश्वास है और वैदिक धर्म ऐसे अंधविश्वास को नहीं मानता। ये धर्म केवल बुद्धि, तर्क व विज्ञानसम्मत हैं। उसी बात को मानता है जिसे हर व्यक्ति को मानना चाहिए, जो यथार्थ है।

- खुशहालचन्द्र आर्य,

180 महात्मा गांधी रोड (दो तल्ला), कोलकाता -7

उत्साह अत्यन्त बलवान है, उत्साही मनुष्य के लिए जगत् में कुछ भी दुर्लभ नहीं।

जिम्मेदार कौन?

अंधविश्वास के चलते मुंबई के विरार में एक 11 साल की बच्ची की जान चली गयी। मासूम सानिया को कब्ज की शिकायत थी। डॉक्टर से उपचार न करवाकर सानिया की मां ने सानिया के साथ काला जादू किया। इस दौरान उसने सानिया के सीने पर चढ़कर डांस किया। काला जादू करने से पहले सानिया की चीख को बाहर जाने से रोकने के लिए उसके मुंह में कपड़े ठूंसे गए थे। दर्द से तड़फती इस मासूम बच्ची के उसकी चाची ने उस वक्त उसके पैर पकड़े हुए थे। अंत में बच्ची ने दम तोड़ दिया। बेशक लोगों के लिए ये जनाजा छोटा था लेकिन सानिया के सवालों ने इसे भारी जरूर बना दिया। यह मात्र संयोग नहीं है कि जिस समय तमाम टीवी चैनलों पर भूत-प्रेत और मृतात्माओं से संबंधित सीरियलों की बाढ़ आई हो उसी समय एक ऐसी हत्या का हो जाना भला किसी को चकित क्यों करेगा ?

हम दुनिया के सामने अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों पर भले ही कितना ही इतरा लें, लेकिन इस हकीकत से मुंह नहीं मोड़ सकते हैं कि देश के एक बड़े तबके के जीवन में अंध विश्वास घुलमिल-सा गया है। आज भी झाड़-फूंक, गंड़ा-ताबीज, डायन-ओझा, पशु या नरबलि जैसी कुप्रथाओं से निपटना एक बड़ी चुनौती भरा काम है। आजकल धर्म के आधार पर ऐसी-ऐसी बातें की जाने लगी हैं, जिनका कोई वैज्ञानिक या तार्किक आधार नहीं है।

भगवान की आज्ञा का अंदाजा लगाकर अंधविश्वास शुरू करने वाले तमाम लोग पता नहीं इस खबर से कितने सहमे होंगे ? लेकिन हर रोज किसी न किसी घर गाँव या शहर से इस तरह की खबरें आना आम-सी बात हो गयी है। पढ़े लिखे लोग चाहे वे वैज्ञानिक हों या डॉक्टर, अंधविश्वास के शिकार हो जाते हैं। दूसरी ओर वैज्ञानिक बातों के संस्कार आज की शिक्षा में अथवा समाज में नजर नहीं आते और वैज्ञानिक विपरीत व्यवहार करते हैं। इससे अगर बचना है, तो एक व्यूह-निर्माण जरूर करना होगा। अंधविश्वास के विरुद्ध जनजागरण का कार्य नि:संकोच निडरता से और प्रभावी ढंग से होना चाहिए। यह जागृति विज्ञान का प्रसार ही नहीं बल्कि मनुष्यता पर एक उपकार भी होगा।

दरअसल धर्म के अन्दर मूर्खता की मिलावट बड़ी सावधानी से की गयी है, इस कारण जब कोई अंधविश्वास के खिलाफ बात करता है तो उसे आसानी से धर्म विरोधी तक कह दिया जाता है। जबकि अंधविश्वासी व्यवहार खुलेआम शोषण को बढ़ावा देता है। हाल ही में कई बाबाओं का पकड़ा जाना, धर्म की आड़ में उनके शोषण के अड्डों का खुलासा होना कोई लुका छिपी की बात नहीं रही परन्तु सवाल अब भी वहीं खड़ा है कि इन सब तमाम पाखण्ड और अंधविश्वासों के लिए क्या केवल गरीब, अशिक्षित ही दोषी हैं या पढ़े लिखे देश के जाने-माने गणमान्य चेहरे भी ? वर्ष 2015 की बात है देश की एक बड़ी नेत्री अंधविश्वास के इस कुण्ड में आहुति देते नजर आई थीं। जब मध्यप्रदेश के निमाड़ व मालवा अंचल में मानसूनी बारिश न होने से वहां के निवासी इंद्र देवता को मनाने की जुगत में जुटे थे तब ये नेत्री पंढ़रीनाथ स्थित इंद्रेश्वर मंदिर में पहुंच कर रुद्राभिषेक करने लगी। यहां तक भी ठीक था लेकिन उन्होंने अंधविश्वास की सारी हदे लांघते हुए माला भी जपना शुरू कर दी थी। पांच दिन बाद बारिश हुई लोगों ने माला का जपना, बारिश का आना एक जगह जोड़कर इस अंधविश्वास को आस्था का जामा पहना दिया। आखिर इस तरह के ढकोसले से ही यदि तमाम काम हो सकते थे तो फिर देश के आम गरीब के टैक्स की राशि को व्यर्थ में ही मौसम से जुड़े वैज्ञानिक अनुसंधानों में क्यों गंवाया जा रहा है ?

अधंविश्वास से ओतप्रोत इस तरह के कारनामों की भारत में कमी नहीं है। इस तरह का यह पहला मामला भी नहीं है। अक्सर हमें राजनेताओं द्वारा वास्तु और ज्योतिष के हिसाब से घरों व कार्यालयों का चुनाव या उसमें फेरबदल कराने की कोशिशें भी देखने-सुनने को मिलती रही हैं।

नेता हो या खिलाड़ी या फिर जाने माने अभिनेता देश को दिशा देने वाले कर्णधारों को लेकर अंधविश्वास की ये खबरें हमें पढ़ने-सुनने व देखने को मिलती रहती हैं। हमारे ये नीति निर्धारक ज्योतिषियों, तांत्रिकों, वास्तुविदों की सलाह पर अच्छा मुहूर्त देख कर पर्चा दाखिल करने, सरकारी आवास का नम्बर चुनने और खिड़की दरवाजे की दिशा बदलने, झाड़-फूंक वाले ताबीज पहनने से भी गुरेज नहीं करते हैं। जब नियम नीतियों, कानूनों को अमलीजामा पहनाने वाले लोग ही स्थितियों को तर्कों की कसौटी पर परखने के बजाय एक अंधी दौड़ में शामिल हो जाएँ तो आम लोगों में तर्कसंगत सोच के विकास की उम्मीद भला कितनी की जा सकती है ? वैज्ञानिक के अवैज्ञानिक व्यवहार को सुधारने के लिए जागरूकता अनिवार्य हो गई है लेकिन कटु सत्य यह है कि जनजागरण के प्रमुख स्थानों पर ही अंधविश्वास का डेरा है। उससे तो यही प्रतीत हो रहा है कि कोई न कोई इसे पाल-पोस कर समाज में जिन्दा रखने का पक्षधर है। यदि ऐसा है तो फिर किसी मासूम सानिया की मौत पर सवाल कौन खड़े करेगा या कौन इस तरह की मौत का जिम्मेदार होगा ? **साभार : राजीव चौधरी**

क्यों करना चाहिए हवन?

ऋषियों ने मानव मात्र के लिए जिन 5 महायज्ञों को नित्यप्रति करने का विधान किया है, हवन-यज्ञ उनमें से एक है। इसी को देवयज्ञ, अग्निहोत्र, होम भी कहते हैं। आधुनिक युग में बदली हुई परिस्थितियों में इसकी उपयोगिता, उपादेयता तथा आवश्यकता क्या है, प्राय: लोग ऐसी शंका करते हैं। आखिर घी जैसी महंगी वस्तु अग्नि में डालने का भी कोई प्रयोजन है? हमारा कथन है कि हवन-यज्ञ भी निष्प्रयोजन नहीं। इसके पीछे भी एक प्रयोजन है, उद्देश्य है और वह उद्देश्य क्या है यही समझने की आज आवश्यकता है।

आज से नहीं सृष्टि के प्रारम्भ से ही अब तक कोई ऐसा देश नहीं है जहाँ यज्ञ को किसी न किसी रूप में न किया जाता हो। भारतीय संस्कृति व सभ्यता और परम्पराओं से तो आप परिचित ही हैं। यहाँ कोई भी कार्य बिना हवन-यज्ञ के नहीं किया जाता। इसके अतिरिक्त यवन देश के तत्त्ववेता **'प्लयूकी'** ने आग को वायुशोधक माना है। चीन, जापान में होम को **'द्योम'** कहते हैं, ईरान के पारसी लोग हवन को भारतीयों की तरह करते आये हैं। वाशिंगटन की **'फाइव फील्ड पाय'** नामक संस्था ने अग्निहोत्री यूनिवर्सिटी की स्थापना करके अमेरिका, जर्मनी आदि अनेक पाश्चात्य देशों में यज्ञ के परीक्षण किये हैं। फाइव फील्ड पाय अर्थात् यज्ञ, दान, तप, कर्म और स्वाध्याय - यह शुद्ध वैदिक नाम उन्होंने स्वीकार किये हैं।

जर्मनी 'बर्थोल्ड मोनिका जेहले' नामक विद्वान् तो यज्ञ की भस्म (राख) को अनेक रोगों में चिकित्सार्थ प्रयोग करने का प्रचार करते हैं अत: हम कह सकते हैं कि यज्ञ एक सार्वभौम सिद्धान्त है जिसे मनुष्य आज भूलता जा रहा है। विज्ञान के शिखर पर पहुंचकर भी इस वैदिक विज्ञान से अनभिज्ञ है। यज्ञ के महत्त्व को जानते हुए भी अपने चारों ओर प्रदूषित वातावरण को शुद्ध न किया तो ऐसी जानकारी का क्या लाभ? यज्ञ क्यों करें? व्यर्थ में घी क्यों जलायें? यज्ञ में मंत्रपाठ करने से क्या लाभ? समिधा आदि का प्रयोग क्यों करें? ऐसी बातें इसलिए की जाती हैं क्योंकि हम यज्ञ के महत्त्व को तो शायद जानते हैं मगर उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर नहीं जानते। हम अंधेरे से बचना चाहते हैं मगर कैसे बचेंगे यह नहीं जानते। हमें पता है कि बिजली है पर जब तक बल्ब नहीं जलाएंगे, प्रकाश कैसे होगा? हम मानसिक शान्ति चाहते हैं इसलिए हे मानव! जो कुछ भी तेरे पास है उसे परमार्थ में लगाओ। यज्ञ करो, यज्ञ के माध्यम से हमारे अन्दर पवित्रता की भावनाएँ जन्म लेंगी जिससे हमारे चित्त का पर्यावरण शुद्ध होगा और अशान्ति दूर होगी। शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार -

स्वर्गकामो यजेत। नौर्ह वा एषा स्वर्ग्या यदग्निहोत्रम्।
स्वर्ग अर्थात् सुख-शान्ति, स्वास्थ्य, दीर्घायु, विद्या, बल, पुत्र, पशु, धन-सम्पदा, यश, कीर्ति तथा मोक्ष तक पहुंचाने वाली नौका अग्निहोत्र (यज्ञ) ही है, अत: स्वर्ग के अभिलाषी को यज्ञ करना चाहिए। **महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः।** (मनुस्मृति 2/18) अर्थात् महायज्ञों और यज्ञों के अनुष्ठान से जीवन को ब्रह्म-प्राप्ति के योग्य बनाया जाता है। **अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः।**(मैत्रायणी उप0 6/36) अर्थात् सुख चाहने वाला प्रतिदिन यज्ञ करे। **अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।(यजुर्वेद)** अर्थात् यह यज्ञ भुवन की नाभि है।

जो पदार्थ अग्नि में डाला जाता है वह अति सूक्ष्म रूप धारण कर कल्याणकारी हो जाता है। उदाहरण स्वरूप शक्कर की थोड़ी-सी मात्रा यदि अग्नि में डाल दी जाए तो भयंकर रोग टी.बी. के बैक्टीरिया नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार जायफल, गुग्गल, लौंग मिलाकर यज्ञ में सामग्री के रूप में प्रयोग करने से मच्छरों का प्रकोप समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार मुनक्का, किशमिश आदि फलों को सामग्री में प्रयोग करने से टाइफाइड (बुखार) के कीटाणु 30 मिनट में तथा अन्य रोगों के कीटाणु कुछ ही समय में नष्ट हो जाते हैं।

अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि यज्ञ की पुष्टिकारक गैसों से वायुमंडल से 96 प्रतिशत हानिकारक कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। यज्ञ द्वारा पर्यावरण शुद्धि का सबसे बड़ा उदाहरण तो आपने 2 दिसम्बर 1984 को विश्व स्तर के समाचार-पत्रों में पढ़ा ही होगा। **'भोपाल गैस काण्ड'** को भला कौन भूल सकता है। इस दिन भोपाल में स्थित यूनियन कार्बाइड कारखाने से गैस रिसाव की खबर मिलते ही दो परिवार **श्री एस. एल. कुशवाहा और श्री एस. राठौर** ने अपने पूरे परिवार सहित यज्ञ करना प्रारम्भ कर दिया जिससे उन दोनों परिवारों पर हानिकारक गैसों का कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ा।

वैदिक मंत्रों के अन्त में प्रयुक्त होने वाला शब्द **'स्वाहा'** हमें प्रेरणा देता है कि हमेशा **'सु'** माने अच्छा, **'आह'** माने बोलें अर्थात् सदा प्रिय बोलो। इसी प्रकार यज्ञ के अंत में बोला जाता है **'इदन्न मम'** अर्थात् यह मेरा नहीं है। यह शब्द प्रेरणा देता है कि **संसार की कोई भी वस्तु हमारी अपनी नहीं है।** बार-बार ऐसा बोलने से संसारिक वस्तुओं से मोह या ममता नष्ट हो जाती है और यह भावना बनती है कि आवश्यकता पड़ने पर अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु का भी त्याग कर दो।

स्पष्ट है कि यज्ञ हमारे लिए कितना आवश्यक है इसलिए अपनी दिनचर्या में, अपने दैनिक व्यवहार में इस यज्ञरूपी महानतम, श्रेष्ठतम कर्म को अपनायें। सारे ब्रह्माण्ड के सामने उत्पन्न हुई **'ग्लोबल वार्मिंग'** की समस्या भी यज्ञ के माध्यम से दूर हो सकती है अत: सभी पाठकों से मेरा नम्र निवेदन है कि यज्ञ को अपने जीवन में धारण कर **'सर्वे भवन्तु सुखिनः'** की भावना को अपने हृदय में पल्लवित कर पुरुषार्थी बनें।

- ब्र. रामवीर शास्त्री
आर्ष महाविद्यालय गुरुकुल कुरुक्षेत्र।

काम आएँ, सर्वदा शुभकामनाएँ

वह दिन का अन्तिम समय था। सब घर जाने को तैयार थे, तभी प्लान्ट में एक तकनीकी समस्या उत्पन्न हो गई और वह उसे दूर करने में जुट गया। जब तक वह कार्य पूरा करता, तब तक अत्यधिक देर हो गई। दरवाजे सील हो चुके थे और लाइटें बुझा दी गयी थीं। बिना हवा और प्रकाश के पूरी रात आइस प्लान्ट में फंसे रहने के भय से उसका कब्रगाह बनना तय था। घंटे बीत गये, तभी उसने किसी को दरवाजा खोलते पाया। सिक्योरिटी गार्ड टॉर्च लिये खड़ा था। उसने उसे बाहर निकलने में मदद की।

उस व्यक्ति ने सिक्योरिटी गार्ड से पूछा -आपको कैसे पता चला कि मैं भीतर हूँ? गार्ड ने उत्तर दिया -सर इस प्लान्ट में 50 लोग कार्य करते हैं, पर सिर्फ एक आप जो सुबह मुझे हैलो और शाम को जाते समय बॉय कहते हैं। आज सुबह आप ड्यूटी पर आए थे, पर शाम को बाहर नहीं निकले। इससे मुझे शंका हुई और मैं देखने चला आया। वह नहीं जानता था कि किसी को छोटी-सी शुभकामना का सम्मान देना कभी उसका जीवन बचायेगी। जब भी आप किसी से मिलें तो गर्मजोशी भरी मुस्कुराहट से उसका सम्मान करें। इससे आपको भी खुशी मिलेगी और सामने वाले व्यक्ति को भी। हमें नहीं पता, पर हो सकता है कि वह आपके जीवन में भी कोई चमत्कार दिखा दें।

महात्मा विदुर ने अपने इसी अनुभव को अधिकाधिक गहराई से यूं व्यक्त किया है :-

चक्षुसा मनसा वाचा कर्मणा च चतुर्विधम्।
प्रसादयति लोकं यस्तं लोकोऽनुप्रसीदति।। (वि.नी. 2.25)

अर्थात् राजा हो या प्रजा, कोई भी व्यक्ति दूसरों को प्रेममयी दृष्टि से, मानसिक हित चिन्तन से, मधुरवाणी से और सहायतापूर्ण कर्म से प्रसन्न करता है, उसे दूसरे लोग भी प्रसन्न करते हैं।

शुभकामना को अंग्रेजी में गुड विसीज़ या सदेच्छा कहते हैं। इसके व्यवहार से हम जैसी इच्छा, कामना दूसरे के लिए करते हैं, वैसी ही वह हमारे लिए भी करता है। विशेषज्ञ कहते हैं कि जब आप सम्बंधों को लोगों के प्रति कुछ शब्द कहकर ही नहीं, प्रत्युत दायित्व समझकर उनके प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हैं, उनसे सहयोग करते हैं, उनसे मधुरता का व्यवहार करते हैं, तो उस समय आपके आसपास के वातावरण में सकारात्मक संदेशों का संचार होता है। आपने इस बात पर ध्यान देने का यत्न किया कि कब-कब आपको क्षणिक ही सही मुस्कुराने, हंसने या गुनगुनाने का अवसर दिया, तो तब न सही अब अवश्य उनके लिए आप कह उठेंगे -**धन्यवाद।** यह प्रवृत्ति आपके लिए मानसिक, शारीरिक, भावनात्मक सुरक्षा के उपहार सिद्ध होगी। अनुहार की पारस्परिकता पर वैदिक ऋषियों ने अनवरत बल दिया है। **अथर्ववेद** (का.19 सूक्त. 52 मंत्र 41) द्वारा हमको सुन्दर सटीक सामयिक मार्गदर्शन सहज ही सुलभ होता है :-

कामेन मा काम आगन् हृदयाद्धृदयं परि।
यदमीषामदो मनस्तदैतूप मामहि।।

अर्थात् कामना से कामना उत्पन्न होती है। यह एक हृदय से दूसरे हृदय के प्रति हुआ करती है। दूसरा व्यक्ति मुझे चाहता है तो मैं भी उसे चाहने लगता हूँ। उसकी कामना ने मुझमें भी कामना को उत्पन्न किया है। वस्तुत: अनुराग पारस्परिक ही हुआ करता है। जो विद्वान्, मनीषी, ज्ञानीजन हैं, उनका मन हमसे दूर न जाने पाये, वे भले किसी परिस्थितिवश हमसे दूर हों, किन्तु उनका मन हमें मिला रहे। शिक्षण संस्थान, गुरुकुल के आचार्य, सदैव अपने शिष्य के साथ नहीं रह सकते। विद्यार्थीगण तो समावर्तन के बाद गृहस्थ के कर्त्तव्यों का पालन करने हेतु दूर-दूर बिखर जायेंगे, किन्तु शिष्यगण अपने आचार्य के मन से जुड़े रहेंगे तो उनकी यही दीक्षा जीवन-उपलब्धियों की दक्षता में परिलक्षित होती दिखाई देगी। मन की कामनाओं का पारस्परिक संचरण आचार्य, शिष्य तक ही सीमित न रहकर संसार की अनेकश: भूमिकाओं में घटित होता है। पिता-पुत्र, माता-पुत्र, पुत्री, मित्र-मित्र, राजा-प्रजा, पति-पत्नी आदि अनेक क्षेत्रों में प्रभावी होता है।

इस कामना का पारस्परिक विनिमय मनोकामना के रूप में आन्तरिक होना चाहिए, केवल बाहरी कृत्रिम नहीं होना चाहिए, अन्यथा दुर्घटना घटित हो सकती है। आख्यान है कि रात्रि के घोर अन्धकार में कई चोर चोरी करने के लिए जा रहे थे। सामने से आते दिखाई दिये- सन्त तुलसीदास। चोरों ने समझा, अपशकुन हो गया। पकड़े जा सकते हैं। चोर ने पूछा -तुम कौन हो? तुलसीदास ने उत्तर दिया- जो तुम हो, सो मैं हूँ। चोरों ने राहत की श्वास ली। तो चलो हमारे साथ, तुलसीदास चल दिये। चोरों ने एक मकान की दीवार को खोदकर नकव लगाया। तुलसीदास को बाहर खड़े रहकर उनको यह काम सौंपा, कोई दिखाई दे, तो अन्दर मिट्टी फेंक देना। हम लोग भाग खड़े होंगे। चोरों ने भीतर जाकर सामान समेटा, तभी तुलसीदास ने भीतर की ओर मिट्टी फेंकना आरम्भ कर दिया। सभी चोर सामान छोड़कर बाहर निकलकर भागे और तुलसीदास से पूछा -कौन दिखाई दिया, बताओ?

तुलसीदास ने कहा- ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है, वही दिखाई दिया। मैंने आप सबको सचेत कर दिया। सन्त तुलसीदास का उद्देश्य था- अपने हृदय की भावना को चोरों के हृदयों तक सम्प्रेषित करना। चोर इसे ग्रहण कर लेते हैं तो चोर नहीं रहेंगे, सन्त बन जायेंगे। यह हृदय से हृदय तक कामना-शुभकामना का सम्प्रेषण हो जाएगा।

संसार को संचालित करने के लिए जब युवा दम्पती विवाह-बन्धन में आबद्ध होते हैं, तब सभी प्रक्रियाओं को पूर्ण करे के बाद, आशीर्वाद वाचन से पूर्व उन दोनों को परस्पर हृदय-स्पर्श कराया

ज्ञान, कर्म, और भक्ति इन तीनों का जिस जगह ऐक्य होता है, वही श्रेष्ठ पुरुषार्थ है।

जाता है, इसे हृदय-परिवर्तन भी कह देते हैं- '**मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनु चित्तं ते अस्तु।**' इसका रहस्य एक 88 वर्षीय बुजुर्ग ने अपने पोते को उस दिन समझाया, जब वह अपनी नववधु के साथ ऊंची आवाज में गुस्से के साथ बात कर रहा था। उस वृद्ध ने बताया कि क्रोध की आवाज कठोर-कर्कश व ऊंची होती है, जबकि प्यार के सुर मधुर, शान्त व मन्द होते हैं, क्योंकि दोनों के हृदय के निकट होते हैं, जबकि क्रोधावेश में उनके हृदय की दूरी बढ़ती ही चली जाती है। विवाह-संस्कार के हृदय-स्पर्श की भूमिका सन्तान, परिवार, समाज की सफलता की प्रवेशिका होती है। इतने पर भी संसार-सागर को तरने के लिए बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है।

तुलसीदास ने महाबली रावण की नम्रता का वर्णन अपनी सहायता व स्वार्थपूर्ति के लिए छद्मवेशी मारीचि से यूं किया है :-

नवनिनीच कै अति दुखदाई। जिमि अंकुस धनुउरग बिलाई।।
भयदायक खल की प्रियवानी। जिमि अकाल के कुसुम भवानी।।

अर्थात् नीच का झुकना (नम्र होना) भी अत्यन्त दु:खदायी होता है। जैसे अंकुश, धनुष, सांप और बिल्ली झुकते हैं तो मनुष्य की घोर हानि करते हैं, दुष्ट व्यक्ति की मीठी वाणी भी उसी प्रकार भयदायक होती है। जैसे बिना ऋतु के फूल होते हैं। उदाहरणत: महानगर के प्रमुख मार्ग पर एक सेवानिवृत्त उच्चाधिकारी अपनी पत्नी के साथ जा रहे थे। स्कूटर पर दो युवक आये और नम्रतापूर्वक उनके चरण स्पर्श किये। उनका काम पूछा और एक उस काम के लिए उच्चाधिकारी को स्कूटर पर बैठाकर आगे ले गया, दूसरे ने उनकी पत्नी के आभूषण उतरवा लिये और दोनों रफूचक्कर हो गये।

वेद विद्या में निष्णात युवा जब शासक, प्रशासक बनते हैं तो वे मनोविज्ञान में दक्ष होते हैं। राजा के दरबार में राजधानी के संभ्रान्त नागरिक उपस्थित हुआ करते थे। कुछ दिन से एक नया व्यक्ति आकर्षक साज-सज्जा के साथ आने लगा। राजा उसको देखकर असहज अनुभव करता था, वह बिल्कुल उसको पसन्द नहीं करता। राजा ने मन्त्री से परामर्श किया। उसने गुप्तचरों द्वारा खोज करायी तो पता चला कि वह चन्दन का बड़ा व्यापारी है और उसने चन्दन का अत्यधिक भण्डारण कर रखा है, वह चाहता है कि इसकी बिक्री हो जाये, तो उसके पास प्रभूत धनराशि आ जाये। व्यापारी मन ही मन सोचता था कि राजा की मृत्यु हो तो उसकी अन्त्येष्टि में चन्दन का प्रयोग हो जायेगा और वह धन से मालामाल हो जाएगा।

मंत्री ने गुप्त आज्ञा से राजा को अवगत कराये बिना ही राष्ट्रभृत महायज्ञ की योजना बना दी। राजधानी, यज्ञधूम से गूंज उठी। राजा, प्रजा, आचार्य सभी हर्ष-विभोर हो गये। उस व्यापारी का सारा चन्दन भण्डार महायज्ञ में उपयोग हो गया। उसको मन वांछित धन लाभ हो गया। वह व्यापारी राज दरबार में यथापूर्ण भाग लेता रहा। यज्ञादि जन कल्याण कार्य कराये जाने से प्रसन्न होकर वह मन ही मन राजा के प्रति भरपूर शुभकामनायें करने लगा। अभी तक मंत्री ने अपनी आज्ञा राजा को नहीं बतायी थी। राजा ने स्वयं ही अपने आन्तरिक भाव परिवर्तन की भूमिका मंत्री को बतलानी शुरु कर दी, जिसका सार यह था कि वह व्यापारी मुझे बुरा नहीं अपितु अच्छा लगने लगा है। लोकोक्ति 'दिल से दिल को राहत' चरितार्थ हो गई। अब मंत्री ने भी अपनी गुप्त अन्वेषण एवं राष्ट्रभृत महायज्ञ की योजना का राजा के समक्ष रहस्योद्घाटन कर दिया।

ऋग्वेद के असीम क्षीर सागर में से उभरती है उसकी नवनीत तुल्य अन्तिम ऋचा जो राष्ट्र-परिवार में सम-संकल्पबद्धता का सन्देश देती है :-

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सु सहासति।। (ऋ. 10.191.4)
हो सभी के सम हृदय संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हो प्रेम से जिससे बढ़े सुख-सम्पदा।।

अपने शिक्षण संस्थान में आचार्यगण इस ऋचा का पाठ या अर्थगायन ही नहीं इसका व्यावहारिक अभ्यास भी कराते रहे हैं, जो मुनि सनत्कुमार के गुरुकुल में आयोजित दीक्षान्त समारोह के दृश्यदर्शन से स्पष्ट झलकता प्रतीत होता है। बृहत् सभा भवन के बड़े मंच पर एक ओर आचार्यगण व दूसरी ओर राज्याधिकारीगण विराजमान थे। इन दोनों के मध्य स्थित उच्चासन पर गुरुकुल पति मुनि सनत्कुमार व राज्य अधिपति (सम्राट) विराज रहे थे। सामने के मैदान में सभी वे ब्रह्मचारी बैठे थे, जिन्हें दीक्षान्त (समावर्तन; के फलस्वरूप आगामी कार्यक्षेत्र के लिए अपने घर प्रस्थान करना था।

मुनि सनत्कुमार ने ब्रह्मचारियों को सम्बोधित करते हुए कहा -अब तक शिक्षण काल में आप लोगों से बहुत प्रश्नोत्तर हुए हैं। आज आपसे अन्तिम प्रश्न करते हैं। बताइये-जीवन में आगे क्या बनना चाहते हैं? अधिपति या बृहस्पति? सभी का एक स्वर से सामूहिक उत्तर था -बृहस्पतिः बृहस्पतिः बृहस्पतिः। उत्तर सुनकर सम्राट महोच्चार कर उठे -मुनि महाराज की जय: जय: जय: । समान संकल्प व हृदय वाले इन्हीं युवकों में से राजकाज के लिए चुने गये युवक ही कह सकेंगे - **वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः**' (यजुर्वेद 9.23) यथा अधिपति तथा प्रजा मति' अर्थात् 'यथा राजा तथा प्रजा' के अनुसार राष्ट्र में सबके लिए शुभकामना करने वाले होंगे तो सार्थक हो उठेगा -**श्रुति संकल्प वयं स्याम पतयो रवीणाम्** (ऋग्वेद 10.121.10) अर्थात् सभी राष्ट्र नागरिक यथायोग्य धनैश्वर्यों के स्वामी होवें।

नयन मुस्कायें, अधर उत्सव मनाये।
काम आयें सर्वदा शुभकामनायें।।

- देवनारायण भारद्वाज,
एम.आई.जी., भू-45, अवन्तिका (प्रथम) ए.डी.ए. कालोनी,
रामघाट मार्ग, अलीगढ़ -202001, उत्तर प्रदेश।

भक्त की दृष्टि

'भगवन् ! आप सबमें व्यापक शान्तस्वरूप और प्राण के भी प्राण हैं तथा ज्ञानस्वरूप और ज्ञान देने वाले हैं। सबके पूज्य, सबके बड़े और सबके सहन करने वाले हैं। इस प्रकार आपको जान हम लोग सदा उपासना करते हैं।'

एक भक्त प्रभु को ऐसा मानता व जानता है कि वह सर्वव्यापक है। मेरे अन्दर, बाहर, ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, दाएं-बाएं सब ओर विद्यमान है। मैं उसमें डूबा हुआ हूँ जैसे जल में मछली होती है। उस प्रभु को इस दृश्य जगत् में अनुभव करता है। अपने प्राणों में भी उसी को अनुभव करता है कि इनको चलाने वाला वह प्रभु ही तो है। वह ज्ञान का भण्डार है तभी तो हमें वेदों का ज्ञान दिया है। संसार का एक-एक पदार्थ, एक-एक जीव कितनी पूर्णता से ज्ञानपूर्वक बनाया है और सबको गति भी दे रहा है। चाहे वह सूर्य हो या चांद, सितारे हों या पृथ्वी, जड़ पदार्थ हों अथवा चेतन, सब कितने नियम से कार्य करते हैं। प्रभु महान् से महान्, बलवान् से बलवान्, विद्वान् से विद्वान्, धनवान् से धनवान् है। सबके बड़े व पूजनीय है अत: हम सब भी प्रभु में डूबकर उसकी उपासना करें।

एक प्रभु का भक्त है जो सदा सब स्थान पर प्रभु के दर्शन करता है। वह दीवाना-सा हो जाता है। जब संसार को देखता है तो हर पदार्थ में ब्रह्म ही दीखता है। हर वस्तु के कण-कण में ब्रह्म का ठिकाना नजर आता है। पेड़ों पर ढूंढता है तो पेड़ के हर पत्ते- पत्ते में उसकी कारीगरी देखकर कह उठता है कि फूलों की काया में भी मेरे प्रभु आप ही बैठे हो। सूर्य, चांद, सितारों में देखता है तो वहाँ भी ओ३म् के प्रकाश को देखकर कह उठता है कि वाह, तू तो यहाँ पर भी विराजमान होकर इन सबको प्रकाश और गति दे रहा है। फिर छोटे-बड़े हर जीवन को देखता है तो पाता है कि इन सबमें प्राण चल रहे हैं। इन प्राणों को कौन चला रहा है? तब उसे पता चलता है कि सबके हृदय में वही छुपकर बैठा है तभी तो इन चर्मचक्षुओं से नजर नहीं आता। वह तो हृदय से, आत्मा से अनुभव करने पर ही दर्शन देता है, बस भक्त वाली दृष्टि बनानी पड़ती है।

इस प्रकार देखते-देखते वह भक्त प्रभु के ध्यान में मस्त हो जाता है। उसे हर ध्वनि में ओ३म् की धुन सुनाई देती है। जहाँ भी यज्ञ-हवन की सुगन्धि हो, सत्संग चल रहा हो, वहीं पहुँच जाता है। जहाँ साधक प्रभु के ध्यान में बैठे हों और मिलकर प्रभु की भक्ति कर रहे हों, वहाँ वह भी प्रभु का गुणगान करने लगता है। उस पर प्रभु की भक्ति का ऐसा जादू चल जाता है कि वह अमन में, चमन में, सबमें उस प्यारे प्रभु का मनन चिन्तन करने लगता है और उसी में मस्त हो जाता है।

उसी मस्ती में देखता है कि कण-कण में विद्यमान प्रभु की तो बहुत निराली शक्ति है। उसका न कोई रूप है, न रंग है, न आकार है, न भार है, न ही कोई हाथ, पांव, नाक, कान, आंख वाला शरीर है, न उसे भूख-प्यास लगती है, न राग, न द्वेष, न छल-कपट, चोरी करता है, न झूठ बोलता है, न ही जले-कटे और रोगी होकर मरता है। वह तो नित्य है, चेतन है, निराकार है, सर्वव्यापक है और अन्तर्यामी है। उससे हम मन की बातें छिपाने का प्रयास करते हैं, लेकिन वह तो हर समय हमें देख रहा है, सुन रहा है, समझ रहा है, जान रहा है। तभी तो वह सबके साथ न्याय कर पाता है। अच्छे-बुरे फल देकर (सुख-दु:ख रूप में) सबके साथ न्याय करता है। इतना शक्तिशाली व महान् है वह प्रभु।

वह प्रभु एक दिन प्राणी को उपदेश देता है कि देख वह मृग पानी के लिए मरुभूमि में भागता फिरता है। सुन्दर चमकती हुई बालू को पानी समझकर आगे और आगे भागता है परन्तु पानी न मिलने पर प्यासा ही मर जाता है। तेरी भी यही अवस्था है। सदा भौतिक सुख की चाह में यही सोचता है कि धन में, भोगों में, इच्छाओं की पूर्ति में सुख है। इसी होड़ में दौड़ता-फिरता, कमाता रहता है फिर अन्त में सबकुछ यहीं पर छोड़कर संसार से विदा हो जाता है। हे प्राणी! आनन्द तो तेरे भीतर है जिसे तू भोगों में ढूँढ़ रहा है। तू मेरी शरण में आजा, मेरा मित्र बन जा, तू अपने आपको, अपने हर कार्य को मेरे अर्पण कर दे, जब तेरा भार तुझ पर नहीं होगा तो तू सब चिन्ताओं से मुक्त हो जाएगा और आनन्द ही आनन्द पाएगा।

हे प्राणी! यदि तू ओ३म् नाम को बिसरा देगा तो जीवन में दु:ख ही पाएगा। विषय-भोगों की खाई में गिरकर चोटें ही चोटें खाएगा। यदि तूने अपनी जीवन-शैली नहीं बदली और वेदमार्ग पर अग्रसर नहीं हुआ तो अन्त में पछताएगा। यदि तू भोगों का दास बना रहा तो समझ ले कि सुख कोसों दूर है। तू रोता हुआ जग में पैदा हुआ था और रोता हुआ ही जग से चला जाएगा। तेरा हित इसी में है कि तू भलीभांति समझ ले कि भोगों में सुख नहीं। सच्चा सुख और आनन्द तो ओ३म् के नाम में ही है। इसे पा ले और आनन्दमग्न हो जा।

ओ३म् की उपासना महान् है क्योंकि एक ओ३म् ही

जो व्यक्ति उद्योगवीर है, वह कोरे वाग्वीर व्यक्तियों पर अधिकार जमा लेता है।

भारत में है ज्ञान-विज्ञान का भण्डार

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भारतवर्ष की उन्नति के लिए वैदिक धर्म का प्रकाश किया, अनेक ग्रन्थ लिखे। शास्त्रार्थ व उपदेश किये, इसके लिए उन्होंने सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। भारत देश व समाज तथा मानवमात्र के उत्थान के लिए महर्षि दयानन्द जीवनपर्यन्त प्रयत्नशील रहे। भारत की उन्नति हेतु इतिहास पर भी प्रकाश डाला। अंग्रेज जब भारत की संस्कृति, इतिहास व गौरवगाथा को भारतीय प्रजा के सामने धूमिल कर रहे थे तब ऐसे समय में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ही भारत के गौरव का गुणगान किया और बताया भारत ही सोने की भूमि अर्थात् स्वर्ण भूमि था जहाँ चक्रवर्ती शासक थे। विदेशी यहाँ आज्ञानुसार आते-जाते थे। भारत की परतन्त्रता से पूर्व जितने भी अन्वेषण हुए, यहीं पर हुए। विदेशों में लोग जंगलियों की भांति रहते थे, जिन्हें रहने की कला सबसे पहले भारत ने सिखाई।

डॉ. जगदीशचन्द्र बसु, आर्यभट्ट भारत के ही वैज्ञानिक थे। इससे पूर्व वराहमिहिर, लगधमुनि, गौतम, कणाद, ईस्वी से पूर्व चरक, सुश्रुत, अग्निवेश, भेल, पाराशर, हारीत आदि ऋषि, वैज्ञानिक यहीं हुए हैं। सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में महर्षि दयानन्द ने भोज-प्रबंध का वर्णन करते हुए लिखा है -

''राजा भोज के राज में और समीप ऐसे-ऐसे शिल्पी लोग थे कि जिन्होंने घोड़े के आकार का एक यान यन्त्र कला युक्त बनाया था कि जो कच्ची घड़ी में ग्यारह कोस और एक घण्टे में साढ़े सत्ताईस कोस जाता था। वह भूमि और अंतरिक्ष में भी चलता था और दूसरा पंखा ऐसा बनाया था कि बिना मनुष्य के चलाये कला यन्त्र के बल से नित्य चला करता और पुष्कल वायु देता था।''

अवैदिक मत-मतान्तरवादी पृथ्वी का आकार विभिन्न प्रकार से मानते हैं। कोई इसे चपटी मानता, कोई शेषनाग (सर्प) के ऊपर टिकी मानता है , कोई बैल के सींग पर टिकी हुई कहता है जबकि वेद में जैसा लिखा है आज के वैज्ञानिकों ने भी वैसा ही अन्वेषण करके बताया है। सर्वप्रथम तो गैलीलियों ने ही पृथ्वी को गोल माना था, इस पर वहाँ के पादरी रुष्ट हो गये थे परन्तु गैलीलियों के पश्चात् न्यूटन ने भी जब अन्वेषण कर पृथ्वी को गोल बताया और

भक्त की दृष्टि...पृष्ठ १७ का शेष

सर्वशक्तिमान् है और सबको शक्ति देने वाला है। वह हमारी वाणी का भी वाणी है। उसकी शक्ति से ही तो यह जिह्वा बोल पाती है। वह तो मन का मन है तभी तो प्राणी सोच समझ पाता है। वह चक्षु का भी चक्षु है, वह प्रकाशमान है। उसकी ज्योति से हम देख पाते हैं। श्रोत्र का भी श्रोत्र है। हमारे प्राणों का भी प्राण वही है। उसी की शक्ति से ही तो हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ, कामेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, देह आदि सब कार्य करते हैं। हमारी आत्मा को ज्ञान, बल, क्रिया करने की शक्ति प्रभु ही तो दे रहे हैं। वो ही महान् और सर्वशक्तिमान् हैं।

जब तक हमारे तन में श्वास चल रही है, हम अपनी रसना का सदुपयोग करते हुए ओ३म् -ओ३म् ही बोलते रहें। जब तक जिह्वा और मन कार्य कर रहे हैं तब तक प्रभु का सिमरन करते रहें, क्योंकि अन्त समय में वह रसना साथ न दे, यह हिले न हिले, कुछ पता नहीं। प्रभु ने हमें सुन्दर-सुन्दर पदार्थ अन्न, दूध, फल, सब्जियाँ, मेवे आदि दिये हैं। हम इनका अकेले भोग न करें बल्कि बांटकर खाएं, त्यागभाव से इन्हें भोगें। अच्छी वाणी से प्रेम बांटते चलें। नित्यप्रति हमारे जीवन में नयापन हो। प्रभु प्रेम का अमृत हम सब मिलकर पीएं, अन्त समय का क्या पता कुछ हो पाए या न हो पाए।

हमारी असली मंजिल तो ओ३म् ही है। हमारे जीवन का किनारा ओ३म् ही है। हमे अपने जीवन का हर पग ओ३म् की ओर बढ़ाना है तभी हम जीवनमुक्त होकर मोक्ष की राह को पा सकते हैं। हमारा जीवन तो कांटो की शैया है, जबकि ओ३म् का भजन फूलों की शैय्या है। इसलिए ओ३म् नाम का गुणगान करते चलें। ओ३म् की राह तो बड़ी निराली है, अद्भुत और सुख देनेवाली है। ओ३म् नाम में ही शान्ति और आनन्द है।

उस परमपिता परमेश्वर के द्वार पर हम जाकर तो देखें, उसे जरा अपना बनाकर तो देखें, फिर देखो कैसे अन्त:करण की नगरी को वह बसा देंगे, सजा देंगे, संवार देंगे। हमारे हृदय में जो अविद्या भरी पड़ी है उसे अद्भुत प्रकाश दिखाकर प्रकाशमान बना देंगे। श्रद्धा और भक्ति से उसका ध्यान लगाकर तो देखें, वह भी हमें कृपादृष्टि से निहारेंगे। उनकी शरण में आकर तो देखें वह अपनी करुणामयी दृष्टि से ऐश्वर्यशाली बना देंगे। ओ३म् ही हमारे जीवन का सच्चा सहारा भी है और किनारा भी। हमें उसी की ओर पग-पग बढ़ना है और उसे पा लेना है।

ओ३म् आनन्दम् गाता जा, गाता जा, गाता जा।
ओ३म् किनारा पाता जा, पाता जा, पाता जा।।

कायर और आलसी व्यक्ति को कभी ऐश्वर्य प्राप्त नहीं हो सकता।

यह भी बताया कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है, तब उन्होंने माना कि गैलीलियों की खोज ठीक थी।

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद में सब सत्य विद्यायें हैं, जितनी भी सत्य विद्यायें है, यह सब वेद में हैं। पृथ्वी के विषय में सत्यार्थप्रकाश के अष्टम समुल्लास में महर्षि ने वर्णन किया है :-

आयं गौः प्रश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः।
पितरं च प्रयन्त्स्वः।। (यजुर्वेद 3.6)

अर्थात् यह भूगोल जल के सहित सूर्य के चारों ओर घूमता जाता है इसलिए पृथ्वी घूमा करती है। पृथ्वी अपनी धूरी पर घूमती हुई सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है, पृथ्वी के अपनी धूरी पर घूमने से दिन व रात होते हैं। जो भाग सूर्य के सामने आता है वहाँ दिन व शेष में रात होती है। भारत में दिन होता है तो अमेरिका में रात होती है।

यही नहीं वेद में समस्त ज्ञान-विज्ञान है। भारत ज्ञान-विज्ञानयुक्त था। यहाँ का इतिहास भी गौरवशाली है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में वर्णन किया है कि चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्यकुल में ही हुए हैं।

''यहाँ सुद्युम्न, भूरिद्युम्न, इन्द्रद्युम्न, कुवलयाश्व, यौवनाश्व, वद्ध्रयश्व, अश्वपति, शशविन्दु, हरिश्चन्द्र, अम्बरीश, ननक्तु, सर्याति, ययाति, अनरण्य, अक्षसेन, मरुत्त और भरत सार्वभौम सब भूमि में प्रसिद्ध चक्रवर्ती राजाओं के नाम लिखें हैं।'' चक्रवर्ती शासकों की गाथाओं से हमारा इतिहास भरा पड़ा है। उनकी वीरगाथाओं को आज जन-जन में सुनाया जाता है। यहाँ तक कि अनेक लोक-कथाएँ आदिवासी क्षेत्रों तक में प्रचलित हैं। वहाँ विभिन्न अवसरों पर स्त्री-पुरुष नृत्य व गायन द्वारा इन कथाओं को प्रस्तुत करते हैं।

आज हम भ्रमवश विदेशों को, वहाँ की संस्कृति को, भाषा को महत्त्व देने लगे हैं, यदि वेद व वेदांग एवं संस्कृत साहित्यों का अध्ययन करें तो हमारे यहाँ ज्ञान-विज्ञान का अथाह भण्डार है। यदि वेद-वेदांगों का, संस्कृत के समस्त साहित्यों का अध्ययन विद्यालयों में पठन-पाठन हेतु लगाया जावे व इन पर अन्वेषण करें तो पुनः गौतम, कणाद, लगधमुनि, वराह मिहिर जैसे महान् विद्वान भारत भूमि पर होने लगेंगे परन्तु आज हम पाश्चात्यता का अन्धानुकरण कर रहे हैं। गणित विद्या हमारे यहाँ से विदेशों में गई, ज्यामेट्री, खगोलशास्त्र, वैदिक ज्योतिष हमारी ही देन है। विडम्बना है कि आज वही ज्ञान अर्जन करने के लिए हम विदेशों में जाते हैं।

शेराल्ड पोलाक जैसे विद्वान् आज भी मैकाले की भांति हमारी भाषा, हमारे महापुरुषों को असत्य व निरर्थक बताते हैं। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास के अन्त में आर्यावर्तदेशीय राजवंशावली का वर्णन किया हैं यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय हैं आज हम अपने इतिहास के वास्तविक स्वरूप से दूर हैं। जैसा कि पुराणों में श्रीकृष्ण को बताया गया है, हमें अपने इतिहास का अन्वेषण व शोध कर शोधग्रन्थ के रूप में प्रकाशित करना चाहिए। स्वामी दयानन्द ने लिखा है -**''हमारे आर्य सज्जन इतिहास और विद्या पुस्तकों का खोज कर प्रकाश करेंगे तो देश को बड़ा ही लाभ पहुंचेगा।''**

कहने का तात्पर्य यह है कि हम धन, बल, ज्ञान, विज्ञान व गौरव में विश्व में सर्वोपरि थे। महाभारत युद्ध के पश्चात् बहुत कुछ खो दिया। आज हम अपने स्वर्णिम प्राचीन उस वैभवशाली भारत को पुनः विश्व का सिरमौर बना सकते हैं। आवश्यकता है वेद-वेदांगों व संस्कृत-साहित्यों की ओर लौटने की, संस्कृत भाषा को समझने की, इतिहास को खोजकर शोध करने की। आज भी जगा भाट आदि द्वारा वंशों को समय-समय पर लिखा जाता है, उसे भी अध्ययन कर इतिहास की परतें खोल सकते हैं। भारत की मार्शल जातियों का इतिहास आज भी लिखा जाता है जो अध्ययन योग्य है। आर्यों का इतिहास अति विस्तृत है। राजपूत, जाट, गुर्जर, सिख, मराठे इनकी वंशावलियाँ आज भी प्रचलित हैं, जो राष्ट्र हेतु गौरव की मिसाल हैं।

विदेशी शासन वर्षों तक भारत पर रहा, वह कभी भी भारत का भला नहीं चाहते थे इसलिए वह यहाँ से धन-स्वर्ण आदि लूटकर ले गये। उनका प्रयोजन ही लूटपाट व मतान्तरण अत्याचार करना था। उन्होंने तलवार के बल पर जनता का रक्त बहाया। हमारे ऐतिहासिक स्मारकों, गुरुकुलों, आश्रमों, भवनों को नष्ट किया। तक्षशिला और नालन्दा के खण्डहर आज भी इसका उदाहरण हैं। यहाँ संग्रहालयों को आग की भेंट कर दिया, महत्त्वपूर्ण पाण्डुलिपियाँ, ज्ञान-विज्ञान कों यहाँ से विदेशों में ले गये और आज हमारी संस्कृति, इतिहास, श्रीराम, श्रीकृष्ण आदि महापुरुषों को निरर्थक व काल्पनिक बता रहे हैं।

आज हमें पुनः अपने प्राचीन ग्रन्थों साहित्य आदि को खोजना चाहिए। महर्षि ने जैसा कि महाभारत से युधिष्ठिर से लेकर पाण्डवों की वंशावली खोजकर सत्यार्थप्रकाश में स्थान दिया जिसके आधार पर हम अपने इतिहास के गौरव को समझ सकते हैं। यह प्राचीन ज्ञान अनेक प्रकार से साहित्य, स्मारक, प्राचीनकाल की सामग्री के रूप में है। आर्यों का इतिहास आज भी पीढ़ी दर पीढ़ी आदि द्वारा लिखा जाता रहा है जिसकी ओर हम सभी को ध्यान देना चाहिए।

- डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह
चन्द्रलोक कालोनी, खुर्जा (उत्तर प्रदेश)

वास्तविक जीवन की खोज

आचार्य सत्यप्रकाश जी

आचार्य, आर्ष महाविद्यालय, गुरुकुल कुरुक्षेत्र

गतांक से आगे...वह उस समय यूनान का सबसे बड़ा फकीर था। सिकन्दर ने डायोजनीज के पास जाकर कहा कि शायद तुमने सिकन्दर का नाम सुना होगा। मैं ही हूँ महान् सिकन्दर। डायोजनीज ने कहा कि जो आदमी खुद को ही महान् समझता है वह कैसे महान् हो सकता है? सिकन्दर ने कहा- मैं तुम्हारी बात सुनकर खुश हुआ क्योंकि वर्षों से मैंने सीधी और सच्ची बात नहीं सुनी। मैं चापलूसों से घिरा रहता हूँ। मेरे आसपास जो खुशामदी लोग हैं, वे मेरी प्रशंसा करते रहते हैं। तुम पहली बार मुझे एक हैसियत के व्यक्ति मालूम पड़े, जिसने सीधी और साफ बात कही, जो मुझे ठीक लगी। मैं तुमसे खुश हुआ। मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ? मेरे पास बड़ी शक्ति है और बहुत धन है। तुम जो चाहोगे वही मैं कर दूंगा। कहो तो... मैं तुम्हारे लिए मकान बनवा दूं! यह क्या टीन के पोंगरे में पड़े हुए हो! कहो तो, तुम्हारे लिए बहुत कीमती वस्त्र ले आऊं, यह क्या...तुम लगभग नग्न लेटे हुए हो। कहो तो मैं तुम्हारे लिए कुछ सेवक नियुक्त कर दूं जो तुम्हारी सेवा करें। अब तुम बूढ़े हो गये हो, अब तुम्हें सहारे की जरूरत है।

डायोजनीज ने कहा- मित्र! यदि तुम कुछ करना ही चाहते हो तो एक छोटी-सी कृपा करो। मैं धूप ले रहा था, तुम खड़े हो गये और मेरी धूप छिन गयी। तुम जरा रास्ता छोड़कर खड़े हो जाओ। तुम बड़े खतरनाक मालूम होते हो। तुम्हारे पास बड़ी ताकत है, तुम्हारे पास बहुत सैनिक हैं, बन्दूकें है, तोपें है। तुम किसी की भी जीवन की धूप छीन सकते हो। बस इतनी ही कृपा करना कि किसी की जीवन की धूप मत छीन लेना। यह सुनकर सिकन्दर बड़ा हैरान हुआ। इतनी हिम्मत किसमें थी कि उसे कोई कह सके कि रास्ता छोड़कर खड़े हो। वह तो उन लोगों में से था जो कि यदि पहाड़ों को कहता कि रास्ता छोड़ दो तो पहाड़ भी रास्ता छोड़कर अलग खड़े हो जाते और यदि पहाड़ रास्ता न छोड़ते तो वह पहाड़ों को उखड़वा कर फिंकवा देता। वह तो किसी भी राजा को आदेश देता रास्ता छोड़ने के लिए तो, वह राजा भी तुरन्त रास्ता छोड़ देता लेकिन एक गरीब फकीर उससे कह रहा है कि हटो, धूप मत छीनो मेरी, दूर खड़े हो जाओ। सिकन्दर बोला -मैं खुश हुआ।

डायोजनीज ने कहा कि मैं तुमसे कुछ पूछना चाहता हूँ। तुम कहाँ जा रहे हो? इतनी फौजें लेकन कहाँ जाओगे? उसने कहा कि हिन्दुस्तान जीतना है। डायोजनीज ने पूछा- फिर क्या करोगे? सिकन्दर -फिर मैं पूरा एशिया जीतूंगा। डायोजनीज -फिर क्या करोगे? सिकन्दर -फिर मैं पूरी दुनिया जीतूंगा। डायोजनीज -फिर क्या करोगे? सिकन्दर बोला- तब मैं आराम और शान्ति से जीऊंगा। तो डायोजनीज खूब हंसने लगा। उसने कहा कि तुम बिल्कुल पागल हो। यदि तुम्हें शान्ति और आनन्द से ही जीना है तो इतनी दौड़-धूप करने की कोई जरूरत नहीं है। आओ, हमारे पास लेट जाओ। हमारे इस पोंगरे में दो आदमियों के लिए काफी जगह है। मैं तो शान्ति से जी ही रहा हूँ, शान्ति से जीने के लिए इतने उपद्रव में पड़ने की कोई जरूरत नहीं है। यदि शान्ति से ही जीना है तो मेरे पास आ जाओ, देखो मैं लेटा हूँ और कितने आनन्द में हूँ। छोड़ो यह दौड़ और तुम भी आनन्द में हो जाओ। यह भी हो सकता है कि तुम शान्ति से जीने के लिए इतने युद्ध करो, इतनी जीतें हासिल करो कि जीत हासिल करते-करते तुम खत्म हो जाओ और शान्ति के दिन आ ही न पायें और ऐसा ही हुआ। सिकन्दर हिन्दुस्तान से जीवित लौटकर नहीं गया। वह रास्ते में ही मर गया। जीत एक तरफ पड़ी रह गयी और वह सिकन्दर महान् समाप्त हो गया।

जिन्दगी में यदि स्पष्ट न हो यह बात कि मैं किसलिए दौड़ रहा हूँ? क्या पाना चाहता हूँ? तो आदमी बहुत-सी व्यर्थ की बातों को खोजने में, व्यर्थ की बातों को इकट्ठा करने में, व्यर्थ की बातों को विजय करने में, व्यर्थ के संघर्ष, व्यर्थ की लड़ाइयाँ, व्यर्थ की दौड़ में अपने-आपको समाप्त कर लेता है और जीवन में जो पाने योग्य था उसे ही पाने से वंचित रह जाता है। तो यह बहुत स्पष्ट हो जाना चाहिए जीवन की यात्रा के प्रारम्भिक चरण में ही कि क्या पाना चाहता हूँ? मुझे क्या बनना है और मेरे जीवन का अन्तिम लक्ष्य क्या है?

यदि आपको दिखाई पड़े कि वे ही लक्ष्य हमारे जीवन के लक्ष्य हैं जो और लोगों के थे तो आप खोजें, विचारें, वृद्धजनों से, पड़ोसियों से जाकर पूछें कि आपके पास इतनी सम्पत्ति है, क्या आपको शान्ति मिली? क्या आपको आनन्द मिला? क्या आपने जीवन के अर्थ को पा लिया है? आपके पास इतना बड़ा भवन है, क्या आप प्रसन्न हैं? क्या आपका हृदय गीत से भरा हुआ है? क्या आपके प्राणों में कोई नृत्य हो रहा है? क्या आपके प्राण पुलकित हैं? क्या आप जीवन पाकर धन्य हुए हैं? छोटे-छोटे बच्चों को पूछना चाहिए और तब निर्णय करना चाहिए कि हमें क्या होना है? क्या पाना है?

यदि छोटे-छोटे बच्चे पूरे देश में अपने बुजुर्गों से यह पूछने लगें तो दो बातें होंगी। एक तो छोटे-छोटे बच्चों को स्पष्ट होगा कि जिन बातों का बड़ा प्रभाव मालूम होता है उन बातों के पीछे कुछ भी नहीं है। जिन बातों में बड़ी इज्जत मालूम होती है वह पीछे बिल्कुल थोथी, खोखली और खाली हैं। दूसरी बुजुर्गों को यह पता चलेगा कि जब बच्चे पूछ ही रहे हैं तो कम से कम सीधी और सच्ची बातें ही उनसे कहें। ...**(क्रमश:)**

उद्योगी और अप्रमादी व्यक्ति के अनुष्ठान में देवता भी सहयोगी होते हैं।

गुरुकुल कुरुक्षेत्र की मधुर स्मृतियाँ

प्रिय पाठकों, गुरुकुल के पूर्व छात्र जो अब समाज के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत हैं। गुरुकुल से शिक्षा प्राप्त कर वैदिक संस्कृति और वेदों का प्रचार-प्रसार कर समाज को नई दिशा दे रहे हैं, ऐसे महानुभावों हेतु ***'गुरुकुल-दर्शन'*** *द्वारा* ***'गुरुकुल कुरुक्षेत्र की मधुर स्मृतियाँ'*** *नाम से यह स्तम्भ आरम्भ किया गया है। इसके अन्तर्गत गुरुकुल कुरुक्षेत्र के पूर्व छात्रों के अनुभव, अध्ययन के समय की मधुर स्मृतियों को प्रकाशित किया जाएगा। आशा करते हैं कि आपको यह स्तम्भ पसंद आएगा।*

प्रो. वेदकुमार 'वेदालंकार'
डॉ. पतंगे हॉस्पीटल, पतंगे रोड
मु. पो.-उमरगा, जिला-उस्मानाबाद
महाराष्ट्र-413606

गतांक से आगे...कुरुक्षेत्र!! यह नाम सुनते ही लोगों की आंखों के आगे महाभारत के युद्ध की घटनाएं उपस्थित हो जाती हैं। कुरुक्षेत्र के भीषण रण में कौरवों-पाण्डवों की अट्ठारह अक्षौहिणी सेना 18 दिनों तक भीषण युद्ध करती रही। इस महायुद्ध का वर्णन पढ़कर ही कई लोगों के मन में कुरुक्षेत्र के बारे में अनेक भ्रमकारी विचार बने हुए हैं। एक सज्जन मुझे बोले - 'सुना है, वहाँ इतना खून बहा है कि वहाँ की मिट्टी आज भी लाल है।' एक दूसरे सज्जन पूछ बैठे-'क्यों जी! क्या वह मैदान इतना बड़ा है कि ओर-छोर भी दिखाई नहीं देगा?' कुरुक्षेत्र के विषय में दोनों शंकाएँ भ्रममूलक हैं। वहाँ की मिट्टी पंजाब और हरियाणा के अन्य प्रदेशों के समान ही मटमैली है तथा मैदान का तो नामोनिशान नहीं है। मेरे निवास के दस वर्षों में कुरुक्षेत्र रेलवे जंक्शन से लेकर गुरुकुल के तीन मील के प्रदेश में सड़क के दोनों ओर एक भी इमारत नहीं थी। दोनों ओर जंगली झाडियाँ उगी हुई थी।

सन् 2012 में पूरे 65 वर्षों के बाद जब मैं गुरुकुल गया तो रास्ते के दोनों ओर दो-दो मंजिली इमारतें, आधुनिक सुख-सुविधाओं से युक्त दुकानें थी। मैदान के विषय में उस काल की अवस्था यह थी कि गुरुकुल के चारों ओर मीलों तक या तो खेत थे अथवा पलाश और बबूल का जंगल था। वसंत और ग्रीष्म ऋतु में एक बहुत सुहावना दृश्य दिखाई देता था। पलाश के वृक्षों के पत्ते झड़ चुके होते थे। शाखाओं पर केसरी रंग के फूल ही फूल लदे होते थे। ऐसे ही किसी दृश्य को देखकर हिन्दी के **कवि बिहारीलाल** ने अतिशयोक्ति अलंकार तथा भ्रमालंकार की कल्पना की होगी -

फूल्यौ देखि पलास-बन समुहैं समुझि दवागि।
फिरि घर को नूतन पथिक चले चकित-चित भागि।।

कोई ऐसा युवक जो कभी गांव से दूर के किसी प्रदेश को गया ही नहीं था, वह नया पथिक यात्रा करने निकला तो गांव के कुछ दूर जाने पर उसे पलाश-वन दिखाई दिया। उस समय केसरी रंग के फूलों से लदी हुई शाखाओं को तथा पूरे केसरी रंग के वन को देखकर भ्रमवश समझा बैठा कि जंगल में आग लगी है, तभी बेचारा घबराकर घर लौट आया। पिता के पूछने पर बोला- जंगल में आग लगी है, मैं देश को कैसे जाऊं?

कुछ ऐसा ही नजारा हमारे गुरुकुल के पास वाले क्षेत्र का हो जाता था। आज तो वहाँ भूले-भटके ही एकाध पलाश-वृक्ष दिखाई देता है। गेंहू के विशाल खेत हैं, वह पुराना पलाश-वन दूर-दूर तक दिखाई नहीं देता। यही दशा कुरुक्षेत्र के मैदान की है। उस प्राचीन काल में कुरुक्षेत्र का यह रणक्षेत्र आज के कुरुक्षेत्र, थानेसर से लेकर करनाल, पानीपत तक पचास-साठ मीलों तक या उससे भी विशाल क्षेत्र रहा होगा परन्तु आज तो सारा क्षेत्र कृषि भूमि के साथ-साथ करनाल, पानीपत जैसे बड़े नगरों को समेटे हुए है। बड़े-बड़े उद्योग धंधे, कल-कारखाने, होटल, दुकानें सभी इस क्षेत्र में पांव जमाये खड़े हैं।

गुरुकुल के चारों ओर महाभारत के युद्ध का स्मरण कराने वाले तीर्थ, सरोवर या भवन आदि विद्यमान हैं। जहाँ योगीश्वर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश सुनाया था वह स्थान **'ज्योतिसर'** के रूप में प्रसिद्ध है। यहां रथ पर सवार अर्जुन और सारथी बने श्रीकृष्ण की विशाल संगमरमरी प्रतिमा है। गुरुकुल के पास ही **नरकातारी** है, जहाँ बाण-शैय्या पर पितामह भीष्म लेटे हुए हैं। गुरुकुल के पीछे की ओर मिट्टी-पत्थर का एक ऊंचा, विशाल टीला है जिसे **'कर्ण का टीला'** कहते हैं। बताते हैं कि यहाँ दानवीर और पराक्रमी योद्धा कर्ण का राजभवन था। इस स्थान से कुछ दूर एक तालाब था जिसके चारों ओर घट और सीढ़ियां बनी हुई थी, लोग इस स्थान को राजा कर्ण की घुड़साल बताते थे।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण तीर्थ सरोवर था-**ब्रह्मसरोवर।** यह सरोवर अति विशाल था। कथा प्रसिद्ध थी कि महाभारत के युद्ध में सारे सेनापतियों और ९९वें भाइयों का विनाश होने के बाद दुर्योधन इसी सरोवर के जल में जो छिपा था तथा जल-समाधि लेकर बैठ गया था। गदाधारी भीम ने उसे ललकारा तो गदा-युद्ध का कुशल योद्धा दुर्योधन जल से बाहर निकला। ...**(क्रमशः)**

जो जीते जी अस्त हो गया, उसका कोई प्रमाण नहीं रहता है।

सुनो, सुनो ऐ वीर जवानों तुमको गीत सुनाता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।।

सुनने वालों भूल न जाना वीरों की कुर्बानी को,
मातृभूमि पर भेंट चढ़ा दी उठती हुई जवानी को।
राजगुरु, सुखदेव, भगत की तुमको याद दिलाता हूँ,
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।। (1)

काला पानी गये थे कितने, कितने फांसी झूल गये।
नेताजी सुभाष बोस को भारत लाना भूल गये।।
उनकी मौत रहस्य रहस्य है, रहस्य की बात बताता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।। (2)

बच्चा बांध पीठ के ऊपर हाथों में तलवार लिये।
क्रूर फिरंगी युद्ध था जंगी उनके खट्टे दांत किये।।
झांसी वाली रानी के मैं यश की कथा सुनाता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।। (3)

महाराणा प्रताप का भाला, भाला बड़ा निराला था।
चेतक घोड़ा सरपट दौड़ा, पड़ा हवा से पाला था।।
उदयपुर की अमर कहानी सुन लो, सुन लो आज सुनाता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।। (4)

अत्याचारी यवनों पर वो मृत्यु बनकर टूट पड़े।
वीर शिवा के सीने में दबे थे शोले फूट पड़े।
छत्रपति की अमर कहानी सुन लो आज सुनाता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।।

बन्दा बैरागी की घटना घटना सुन दिल हिलता है।
बच्चा चीर ठूंस दिया मुंह में, इतिहास कहीं नहीं मिलता है।।
बिगड़ी हालत देख-देखकर रोता और रुलाता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।। (5)

बच्चे चारों देश पे वारे सबकुछ देश पे वारा था।
गुरु गोबिन्द सिंह नाम था उनका, धर्म जान से प्यारा था।।
आओ शीश झुकायें मिलकर मैं भी शीश झुकाता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।। (6)

आजादी का मंत्र दिया वो देव दयानन्द प्यारे थे।
धर्म धुरन्धर धर्म के रक्षक, ऋषिवर सबसे न्यारे थे।।
यत्र, तत्र, सर्वत्र चहुंदिश छवि ऋषि की पाता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।।

आर्यवीर 'संजीव' कलम से कैसे सब लिख पाऊंगा।
ग्राम, नगर और घर-घर जाकर सोया खून जगाऊंगा।।
काम मेरा बस खून जगाना, काम की बात बताता हूँ।
मैं वीरों की गाथा गाकर सोया खून जगाता हूँ।। (7)

रचना : संजीव कुमार आर्य, मुख्य संरक्षक, गुरुकुल कुरुक्षेत्र

देश में पहली बार गैर कृषि विश्वविद्यालय की अनूठी पहल

जीरो बजट खेती को लेकर राज्यपाल आचार्य देवव्रत व सुभाष पालेकर करेंगे किसान सम्मेलन को सम्बोधित

कुरुक्षेत्र : वह अकेला चला था लेकिन वो आगे बढ़ता गया और कारवां जुड़ता गया। यह इतना आसान नहीं था क्योंकि हरित क्रांति के बाद कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से किसानों को जमकर मुनाफा हुआ था। कीटनाशकों से गिरते स्वास्थ्य और बढ़ती अनगिनत बीमारियों के प्रति लोगों में जागरूकता की अलख जगाना इतना आसान कार्य नहीं था लेकिन जब कोई दिल से ठान ले तो मंजिल मिल ही जाती है।

हिमाचल के राज्यपाल आचार्य देवव्रत व शून्य लागत प्राकृतिक खेती के जनक पद्मश्री सुभाष पालेकर के अनगिनत प्रयासों बिना थके, बिना हारे और किसान कीटनाशकों के प्रयोग को छोड़ शून्य लागत प्राकृतिक खेती करने को राजी हो गए। अब वही किसान शून्य लागत प्राकृतिक खेती से जमकर मुनाफा कमा रहे हैं और उनकी उगाई गई पैदावार भी कीटनाशकों से होने वाली पैदावार से अच्छी है। प्रयासों और जागरूकता के मिशन को पाना इतना आसान नहीं था लेकिन राज्यपाल आचार्य देवव्रत ने अपने तप और प्रयासों से कीटनाशकों से फैल रही बीमारियों के प्रति लोगों में अल्ख जगाई।

आचार्य देवव्रत व सुभाष पालेकर से प्रेरणा लेकर महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय के उप कुलपति प्रो. बिजेंद्र कुमार पूनिया तथा छात्रों ने भी जीरो बजट खेती को जन-जन तक पहुंचाने के लिए एक बड़ा अभियान छेड़ा है। देशभर में पहली बार किसी गैर कृषि विश्वविद्यालय द्वारा इतना बड़ा अभियान छेड़ा गया है। विश्वविद्यालय परिसर में **'एक किसान-एक जवान'** प्रोजेक्ट शुरू किया गया है। इस प्रोजेक्ट को सफल बनाने के लिए तीन प्रशासनिक कमेटियां भी गठित की है।

एक कदम आगे बढ़ते हुए विश्वविद्यालय द्वारा 17 फरवरी को विश्वविद्यालय परिसर में **किसान सम्मेलन** का भी आयोजन किया जा रहा है जिसमें स्वयं हिमाचल के राज्यपाल आचार्य देवव्रत तथा सुभाष पालेकर 11 सौ किसानों को एक साथ जीरो बजट खेती की ट्रेनिंग देंगे। सम्मेलन में समूचे क्षेत्र से आए 1100 किसानों को एक-एक एकड़ के लिए घन जीवामृत वितरित किया जाएगा ताकि भविष्य में ये किसान बिना कैमिकल के अपनी खेती कर सके।

सभी 1100 किसानों के लिए भिवानी की गऊशाला में घनजीवामृत तैयार किया जा रहा है। भिवानी के ही प्रमुख समाजसेवी एवं भिवानी महापंचायत के संयोजक बृजलाल सर्राफ की देखरेख में एक अभियान के तौर पर घनजीवामृत तैयार हो रहा है जिसे रोहतक सम्मेलन में वितरित किया जाएगा।

क्या है घनजीवामृत?

घनजीवामृत के लिए किसानों को बाजार से कुछ खरीदने की आवश्यकता नहीं है। रासायनिक खाद व कीटनाशक आदि पर एक पैसा भी खर्च किए बिना केवल देसी गाय के गोमूत्र व गोबर से इसे तैयार किया जाता है। इसके लिए 100 किलोग्राम देसी गाय का गोबर, 1 किलोग्राम गुड, 2 किलोग्राम बेसन तथा खेत की मिटटी एक मुट्ठी की जरूरत पड़ती है और गाय का मूत्र दो लीटर इस्तेमाल होता है। इस मिश्रण को दो से चार दिन तक छाया में सूखाया जाता है। तैयार घनजीवामृत 6 माह तक इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके लिए केवल देसी गाय का गोबर ही इस्तेमाल किया जाता है क्योंकि उसमें नाईट्रोजन की मात्रा सबसे अधिक होती है जोकि खेती के लिए अत्यधिक लाभप्रद होता है।

घनजीवामृत को खेती के लिए लाभप्रद

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के वैज्ञानिकों तथा हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय व पंजाब विश्वविद्यालय सहित विभिन्न सरकारी व गैर सरकारी संगठनों के कृषि वैज्ञानिकों ने भी इस विधि को खेती के लिए लाभप्रद बताया है।

विशेषज्ञों के अनुसार किसानों द्वारा अधिक उत्पादन के झूठे लालच में खेतों में रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से न केवल भूमि बंजर हो रही है बल्कि हमारे खाद्यान्न भी विषयुक्त हो चुके हैं जिस कारण नई बीमारियों ने हमें लपेट लिया है। बढ़ती लागत तथा कम पैदावार के कारण किसानों की आर्थिक स्थिति भी कमजोर होती जा रही है और कर्ज के बढ़ते बोझ के चलते किसान आत्महत्या करने पर विवश हो रहे हैं।

रासायनिक खाद व कीटनाशकों के प्रयोग के लिए खेतों में पैदा होने वाली अन्न, फल व सब्जियां विषैली हो चुकी हैं। जो खाद खेतों में डालते हैं वह इन विषैले खाद्यान्न के माध्यम से हमारे शरीर में पहुंच रहा है जिससे कैंसर, त्वचा रोग, हार्ट अटैक जैसी भयानक बीमारियां पैदा हो चुकी हैं जो हमारी आने वाली नस्ल को कमजोर, बीमार और मंदबुद्धि तक बना रही हैं। इन रासायनिक खाद व कीटनाशक दवाओं का दुष्परिणाम है की आज हमारे खेतों में किसानों के मित्र कहे जाने वाले जीव जन्तु व कीट पतंगे गायब हो चुके हैं। इन हालात में जीरो बजट प्राकृतिक कृषि के माध्यम से गेहूं, धान, गन्ना, दलहन सहित अन्य फसलों को विषमुक्त किया जा सकता है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती से घटते जलस्तर पर रोक लग सकेगी क्योंकि रासायनिक दवाइयों और कीटनाशक बेहद गर्म होते हैं। जोकि अत्यधिक पानी की खपत मांगते हैं। इसके अलावा जीरो बजट प्राकृतिक खेती किसानों के लिए वरदान सिद्ध हो रही है क्योंकि इसमें किसान को कुछ भी खर्च नहीं करना पड़ेगा और उसकी फसल भी अच्छी होगी। वर्तमान समय में जीरो बजट कृषि से उत्पादित फसल की डिमांड बढ़ी है जिस कारण यह फसल बाजार में कीटनाशकों से हुई फसल की तुलना में कई गुणा महंगी बिकती है।

आलसी और अनुद्योगी रहकर सौ वर्ष जीने की अपेक्षा दृढ़ उद्योगी का एक दिन का जीवन श्रेष्ठ है।

गुरुकुल कुरुक्षेत्र : संक्षिप्त परिचय

गुरुकुल कुरुक्षेत्र में शैक्षणिक स्तर पर दो प्रकल्प चलते हैं। सी.बी.एस.ई. पाठ्यक्रम के अनुसार **10+2** तक का विद्यालय है जो **ISO 9001: 2008** प्रमाणित संस्थान है। इस पाठ्यक्रम के अनुसार यहाँ लगभग 1500 विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। दूसरा **आर्ष महाविद्यालय** है जिसमें वैदिक व्याकरण व वैदिक साहित्य का अध्ययन कराया जाता है। इन शिक्षण प्रकल्पों के अतिरिक्त शिक्षा, समाज सेवा व सामाजिक चेतना को ध्यान में रखते हुए जो विविध गतिविधियाँ चलाई जा रही हैं, इनकी संक्षिप्त झलक निम्न प्रकार है –

प्रशासनिक विभाग : आधुनिक तीन मंजिला प्रशासनिक भवन में अतिथियों के लिए 250 कुर्सियाँ एवं सुविधायुक्त वातानुकूलित सभागार व कार्यालय हैं।

आर्ष महाविद्यालय : वैदिक धर्म एवं वेदों के प्रचार हेतु आर्ष पाठ विधि से व्याकरण एवं वेद के विद्वान् तैयार किये जा रहे हैं।

वातानुकूलित संगणक प्रयोगशालाएँ : गुरुकुल में वातानुकूलित कम्प्यूटरीकृत शिक्षा–व्यवस्था है। यहाँ 75 कम्प्यूटर हैं जिन पर छोटे–बड़े छात्रों हेतु अलग–अलग व्यवस्था है। इनमें प्रोजेक्टर और वाई–फाई की सुविधा भी है।

वातानुकूलित भाषा व विज्ञान प्रयोगशालाएँ : शिक्षा को व्यावहारिक रूप देने व छात्रों के पूर्ण विकास हेतु बहुतकनीकी यन्त्रों से युक्त व दृश्य–श्रव्य यंत्रों से सुसज्जित प्रयोगशालाएँ हैं।

वातानुकूलित पुस्तकालय व वाचनालय : छात्रों के विकास हेतु वेद, उपनिषद्, वेदांग एवं स्वतन्त्रता सेनानियों का इतिहास व महापुरुषों की जीवनियाँ तथा विज्ञान, दर्शन सम्बन्धी हजारों पुस्तकें व सी.डी. आदि हैं। 21 दैनिक समाचार पत्र एवं 75 साप्ताहिक व मासिक पत्रिकाएँ आती हैं।

अत्याधुनिक गोशाला : छात्रों को शुद्ध एवं पौष्टिक दुग्ध उपलब्ध कराने के लिए गुरुकुल में अत्याधुनिक गोशाला है। जहां पर विभिन्न देशी व विदेशी नस्ल की लगभग 282 गायें हैं जो प्रतिदिन 1150 लीटर दूध देती हैं।

अश्वारोहण (घुड़सवारी) : इसके लिए उत्तम नस्ल के 8 घोड़ियाँ व 1 घोड़ा है। कुशल प्रशिक्षकों द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है।

क्लीनिकल लेबोरेट्री : पशुओं की विभिन्न बीमारियों से संबंधित टेस्ट हेतु लैब है जहां पर अनुभवी डॉक्टर द्वारा पेशाब, खून व दूध आदि की प्रामाणिक जाँच की जाती है।

शूटिंग (निशानेबाजी प्रशिक्षण) : इसके माध्यम से गुरुकुल ने अभी तक 10 अन्तर्राष्ट्रीय खिलाड़ी राष्ट्र को दिये हैं।

एन.सी.सी (छोटे–बड़े छात्रों हेतु) : गुरुकुल एन.सी.सी. के छात्र गणतन्त्र व स्वतंत्रता दिवस की परेड में भाग ले चुके हैं तथा एन.सी.सी. के कैम्पों में प्रथम स्थान प्राप्त कर चुके हैं।

नेशनल डिफेंस एकेडमी (एन.डी.ए.) : सेवानिवृत्त सेना अधिकारी के मार्गदर्शन में एन.डी.ए. परीक्षा की तैयारी के लिए दो एकड़ भूमि पर ऑब्स्टेकल कोर्स का निर्माण किया गया है।

एन.एस.एस विंग : राष्ट्रीय एकता व सामाजिक सद्भाव हेतु एन.एस.एस. द्वारा सामाजिक चेतना जागृत की जाती है।

विशाल भोजनालय : छात्रों, गुरुकुल से जुड़े सभी कर्मचारियों एवं अतिथियों हेतु विशाल भोजनालय की व्यवस्था है।

संगीतमय फव्वारे : गर्मियों की उमस से बचने एवं मनोरंजनपूर्ण स्नान के लिए आकर्षक संगीतमय फव्वारें गुरुकुल में है।

पं. अमीचन्द संगीत केन्द्र : छात्रों को मनोरंजन एवं संगीत शिक्षण हेतु भक्त अमीचन्द संगीत केन्द्र में संगीत की शिक्षा–व्यवस्था है।

योग एवं प्राकृतिक चिकित्सालय : गुरुकुल में योग एवं प्राकृतिक चिकित्सालय है जो गम्भीर रोगों के उपचार के साथ चिकित्सा सम्बन्धी 'डिप्लोमा इन योग एंड साइंस' कोर्स भी कराता है।

धन्वन्तरि चिकित्सालय : छात्रों के शारीरिक स्वास्थ्य एवं खेलकूद में आने वाली हल्की चोट–मोच आदि के लिए आयुर्वेदिक चिकित्सालय में कुशल वैद्यों की व्यवस्था है।

वेद प्रचार विभाग : भारतीय संस्कृति एवं वेदों के प्रचार हेतु गुरुकुल में वेद प्रचार विभाग का गठन किया गया। जिसके तहत लगभग डेढ़ दर्जन प्रचारक दिन–रात विभिन्न क्षेत्रों में घूम–घूम कर लोगों को वेदवाणी और आर्य सिद्धान्तों के प्रति जागरूक कर रहे हैं। वहीं योग शिक्षकों के माध्यम से विद्यालय व कॉलेजों में योग एवं चरित्र निर्माण अभियान चलाया जा रहा है।

इनके अतिरिक्त **जीरो बजट प्राकृतिक कृषि फार्म, स्वामी श्रद्धानन्द आयुर्वेदिक फार्मेसी, आकर्षक पौधशाला (नर्सरी)** भी है। आर्य भजनोपदेशक प्रशिक्षण केन्द्र, जिसमें आर्य भजनोपदेशक तैयार किये जाते हैं। वहीं **'गुरुकुल–दर्शन'** मासिक पत्र के माध्यम से वैदिक धर्म एवं संस्कृति का प्रचार–प्रसार किया जा रहा है।

परिश्रमी, पुरुषार्थी मनुष्य बलवान् होते हैं, इसमें कोई संदेह नहीं।

प्रान्तीय आर्य महासम्मेलन की छलकियाँ

गुरुकुल की विविध गतिविधियों की झलकियाँ

वेद प्रचार के क्षेत्र में सराहनीय कार्यों के लिए गुरुकुल के प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी को सम्मानित करते हुए केन्द्रीय मंत्री डॉ. सत्यपाल सिंह आर्य

वीर क्रान्तिकारियों की शरणस्थली रहे गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में आ. प्र. सभा के प्रधान मा. रामपाल आर्य, आचार्य राजेन्द्र जी के साथ कुलवन्त सिंह सैनी जी व अन्य

वेद प्रचार अभियान के तहत कैथल के गांव शिमला में आयोजित कार्यक्रम में उपस्थित लोगों को सम्बोधित करते हुए गुरुकुल के प्रधान कुलवन्त सैनी जी

गुरुकुल कुरुक्षेत्र में सम्पन्न हुई आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा की महत्त्वपूर्ण बैठक को सम्बोधित करते हुए गुरुकुल के यशस्वी प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी जी

सी.एस.एस.आर.आई करनाल के निदेशक डॉ. पी. सी. शर्मा के साथ गुरुकुल के प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी जी व सह-प्राचार्य शमशेर सिंह जी

कैथल में 'जीरो बजट प्राकृतिक कृषि' को लेकर किसानों को जागरुक करते हुए गुरुकुल कुरुक्षेत्र के प्रधान कुलवन्त सिंह सैनी जी व मनीराम आर्य

RNI Reg.No. : HARBIL / 2015 / 64244
Postel Regn. No. HR / KKR / 181 / 2018-2020

स्वामी- गुरुकुल कुरुक्षेत्र, कुरुक्षेत्र के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक श्री कुलवंत सिंह सैनी द्वारा क्रेजी ऑफसेट प्रिंटिंग प्रैस, सलारपुर रोड, निकट डी.एन. कालेज, कुरुक्षेत्र (हरियाणा) से मुद्रित एवं गुरुकुल कुरुक्षेत्र, (निकट थर्ड गेट कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी), कुरुक्षेत्र से प्रकाशित। सम्पादक -कुलवंत सिंह सैनी

मूल्य-15रु एक प्रति (150रु वार्षिक)

प्रतिष्ठा में

____

____

____